R.N.I. No. 2321/57

ओ३म्

रजि. सं. MTR नं. 04/2016-18

फरवरी 2018

अंक 1

तपोभूमि

मासिक

महर्षि दयानन्द सरस्वती

(जन्म दिवस : 12 फरवरी)

नव निर्माण

बहिन शान्ति नागर, आगरा

मिट जाता है वर्तमान जब,
तब इतिहास बना करता है।
त्याग और बलिदानों से ही,
नव निर्माण हुआ करता है॥

कन-कन कर गल गया बीज,
तब वृक्ष बना फल की ऋतु आई।
बूँद-बूँद मिट गया मेघ जब,
प्यास धरा की तब बुझ पाई॥

कन-कन कर जल गई वर्तिका,
मिटा सकी तब छाये तम को।
पिस-पिस कर जब धूल बन गई,
तब छू पाई धरा गगन को॥

सच मानो अस्तित्व मिटाकर,
परमानन्द मिला करता है॥

काँटों में खिलने वाले फूलों का,
गन्ध अमिट होता है।
मुश्किल से मिलने वाले,
साहिल से प्यार अधिक होता है॥

हार कहाने से पहले,
निज हृदय बिंधाता है हर मोती।
बंशी के सुमधुर गीतो में,
छिद्रों की प्रिय पीड़ा रोती॥

-शेष पृष्ठ सं0 35 पर

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्0)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका

(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–64 संवत्सर 2074 फरवरी 2018 अंक 1

संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

संपादकः
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

फरवरी 2018

सृष्टि संवत्
1960853118

दयानन्दाब्दः 194

प्रकाशक
सत्य प्रकाशन
आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग
मसानी चौराहा, मथुरा
(उ0 प्र0)
पिन कोड–281003

दूरभाषः
0565–2406431
मोबा. 9759804182

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4
स्वतंत्रता	–श्यामविहारी मिश्र	5–8
विरजानन्द प्रकाश	–भीमसेन शास्त्री	9–12
सम्बन्ध–धर्म	–स्वामी सत्यानन्द महाराज	13–15
अनेक धर्मों की उत्पत्ति	–बाबू सूरजभान वकील	16–19
स्वास्थ्य चर्चा		20–23
ऋषिवर ने भर दिये मधु कलश	–रोहतास आर्य	24–25
स्वास्थ्य चर्चा	–डॉ0 साहबसिंह वर्मा 'आर्य'	26–29
महर्षि दयानन्द	–रोहतास आर्य	30–31
देव दयानन्द	–ओंकारसिंह विभाकर	32–33
ऋषि बोधोत्सव पर 51 कुण्डीय आयोजन		34

❁❁❁

वार्षिक शुल्क 150/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 1500/– रूपये

वेदवाणी

लेखक: डॉ0 रामनाथ वेदालंकार

ब्रह्मौदन से मृत्यु का अतितरण

यो दाधार पृथिवीं विश्वभोजसं यो अन्तरिक्षमापृणाद्रसेन।
यो अस्तभ्नाद्दिवमूर्ध्वो महिम्ना तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम्।।

–अथर्व0 4.35.3

शब्दार्थ:–

(य:) जिसने (दाधार) धारण किया है (विश्वभोजसं पृथिवीम्) सबको भोजन देनेवाली पृथिवी को, (य:) जिसने (अन्तरिक्षम्) अन्तरिक्ष को (आपृणाद्) भरा है (रसेन) रस से, (य:) जिसने (दिवम्) द्युलोक को (महिम्ना) महिमा से (ऊर्ध्व: अस्तभ्नात्) ऊपर थामा हुआ है, (तेन ओदनेन) उस ओदन से, (मृत्युम्) मृत्यु को (अति तराणि) मैं पार कर जाऊँ।

भावार्थ:–

इस मन्त्र में ब्रह्मौदन की महिमा का वर्णन है। ब्रह्म को ओदन इस कारण कहा गया है कि वह भक्तजनों या योगियों का भात है, उसके बिना उनकी अध्यात्म–क्षुधा की निवृत्ति नहीं हो सकती। 'ब्रह्म योगियों का भात है', उसे जितना अधिक राँधें उतनी ही अधिक सुगन्ध छोड़ता है, उससे अध्यात्मसाधक की तृप्ति होती है, यह विषय तो 'ब्रह्मौदन' शब्द से ही सूचित हो जाता है। शेष महिमा मन्त्र में अन्य शब्दों से प्रकट की गयी है।

जब ध्यानपिपासु लोग ब्रह्मौदन का चर्वण करते हैं, उसके रस का आस्वादन करते हैं, तब उनका आत्मा ब्रह्ममय हो जाता है और प्रकृति में जो भी अद्भुत घटनाचक्र घटित हो रहा है, उस सबका कारण ब्रह्म ही है, यह उन्हें हस्तमलकवत् स्पष्ट हो जाता है। ऐसा ही एक ब्रह्मौदनास्वादक प्रभुभक्त मन्त्र में निम्न उद्गार प्रकट कर रहा है। ब्रह्म ने विश्वभोजा: पृथिवी को धारण किया हुआ है। पृथिवी 'विश्वभोजा:' इस कारण है, क्योंकि वह सबको भोजन देती है। पृथिवी के खेतों में नाना प्रकार के अन्न उपजते हैं, जिनसे मनुष्यों की पुष्टि होती है। बाग–बगीचों में रसीले फल पैदा होते हैं। पृथिवी हमें अनेक वन्य औषधियाँ भी देती है, जिनका सेवन करके हम रोगमुक्त होते हैं। 'ब्रह्म ने अन्तरिक्ष को रस से भरा है'। समुद्र, सरोवर, नदियों आदि से वाष्प बनकर जल अन्तरिक्ष में जाकर बादल बनता है और उससे अमृत–जल की वृष्टि होती है, जिससे भूमि घास, वृक्ष–वनस्पतियों से लहलहाती है, सरिताएं बहती हैं, ताल–तलैया भरते हैं,

शेष पृष्ठ सं0 15 पर

कर्तव्य और आज्ञा पालन

लेखकः– श्यामबिहारी मिश्र

कर्त्तव्य संसार में सबसे अधिक विचारणीय विषय है। प्रत्येक जीवधारी हर समय न चाहते हुए भी कोई न कोई कार्य किया ही करता है। यदि हाथ पैर से कोई काम न करे तो भी आँख कान आदि से सैंकड़ों पदार्थ देख सुन पड़ा करते हैं और किसी प्रकार से इनके कर्मों का अवरोध कर लेवे तो भी मन दौड़ा करता है। इसकी चालों के रोकनेवाले संसार में बहुत कम लोग हैं। सिवा महान् योगियों के इस की गति नहीं रोक सकता। गीता में क्या ही ठीक कहा गया है कि–

मन चंचल बलवान प्रमाथी है दृढ़ भारी।
इसका निग्रह गुनौ मरुत–बंधन–अनुहारी।।
किन्तु किये अभ्यास तथा वैराग्य विधाना।
हो सकता है स्वबस जगतविजयी जग जाना।।

फिर योगी लोग भी जब तक समाधि लगाए रहते हैं, तभी तक मन का निग्रह कर सकते हैं, इसके पीछे नहीं। समाधि छोड़ते ही उनका भी मन दौड़ने लगता है। समाधि की अवस्था में भी शरीर में रुधिर संचालनादि की प्राकृतिक क्रियाएँ हुआ करती हैं जिन्हें गीता में अकर्म कहा गया है। अतः प्रकट हुआ कि जीवितावस्था में प्रत्येक शरीरी चाहते अथवा न चाहते हुए सदा कोई न कोई काम अवश्य किया करता है। जब काम का करना अनविार्य है तब यह जानना परमावश्यक है कि सुधी को कैसे कर्म करने चाहिएँ। इसी ज्ञान को कर्त्तव्यशास्त्र कहते हैं। भगवान् ने गीता में क्या ही खूब कहा है कि, "कोई एक क्षण भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता और न चाहते हुए भी प्राकृतिक गुणों से कर्म करता है। इसलिये कर्म, विकर्म और अकर्म सबको जानना चाहिए क्योंकि कर्म की गति गहन है।"

गीता के अनुसार अकर्म ही विकर्म अर्थात् उचित कार्य है। जो काम अपनी कामना–शांति के लिये अथवा स्वार्थवश किया जाता है वह गीतानुसार कर्म है। इससे इतर कार्य अकर्म हैं। यथार्थ में अकर्म ही को कर्तव्य समझना चाहिए, क्योंकि वह प्राकृतिक गुणों अथवा परहित के लिये किया जाता है। धार्मिक संसार में अधिकार है ही नहीं। वहाँ तो केवल कर्त्तव्य ही कर्त्तव्य है। फिर भी साधारण संसारी मनुष्यों के लिये केवल अकर्म करने से काम न चल सकने की आपत्ति है। इसलिये गृहस्थ लोगों के वास्ते कर्त्तव्यशास्त्र की सीमा अकर्मों से कुछ आगे बढ़ानी आवश्यक है। गीता के अनुसार तो–

यस्य सर्वे समारम्भा काम–संकल्प–वर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणि तमाहुः पंडितं बुधाः।।

जिसके सब उद्योग स्वार्थ की कामना से मुक्त हैं और जिससे सब कर्म ज्ञानाग्नि में जल गए हैं उसे पंडित कहते हैं। फिरभी पंडित का इतना ऊँचा लक्षण रखकर हम लोगों की संसार-यात्रा नहीं चल सकती। केवल अकर्म से कर्मयोगी का निस्तार हो सकता है, साधारण गृहस्थ का नहीं। इसलिये अब सांसारिक विचारों से भी कर्तव्य का विचार किया जाता है।

कर्त्तव्य का शाब्दिक अर्थ है करणीय कार्य। अतः जो कुछ करने के योग्य है अथवा जिसका करना उचित है उसी को कर्तव्य कहते हैं। मनुष्य के लिये सबसे अधिक आवश्यक कार्य उचित प्रकार से जीवन-यात्रा करनी है। चाहे अपनी इच्छा से हो चाहे पराई से, किन्तु किसी प्रकार हम लोग इस पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हैं, अतः हमारा पहला कर्त्तव्य यही है कि जितने दिन मनुष्य उचित प्रयत्न से शरीर धारण कर सकता है, उतने दिन यहाँ सुखपूर्वक बिना किसी को अनुचित कष्ट पहुँचाए रहें। प्रत्येक मनुष्य को अपने वास्तविक कर्म वैसे ही रखने चाहिएँ जैसे कि वह संसार में अपने कार्य प्रकट करना चाहता है, जैसे हम सब लोग चाहते हैं कि लोग हमें सच्चा, निष्कपट, स्वार्थहीन, विद्वान आदि समझें। अतः हमारा पहला कर्त्तव्य है कि अपने में वे सब गुण लाने का प्रयत्न करें कि जिनका अपने में होना हम समाज में दिखलाना चाहते हैं। जो अपने विचार में सच्चा नहीं है उसे काई स्वाभाविक अधिकार नहीं है कि दूसरे से अपने को सच्चा कहलाने का प्रयत्न करें। अतः कर्त्तव्यशास्त्र का पहला अंग सत्य है, जिसके बिना कोई मनुष्य बड़ा नहीं हो सकता। बड़ाई दो प्रकार की होती है, एक तो वास्तविक और दूसरी दिखलौआ। वास्तविक प्रकार से वही पुरुष बड़ा है जो बुद्धिमान हो कर भी अपने में कोई भारी दोष नहीं देखता। अपने लिये सब से अच्छा साक्षी आत्मा ही है। अपने विषय में स्वयं मैं जितना कुछ जानता हूँ उतना और कोई नहीं जान सकता। अतः यदि मैं ही अपने विषय में कोई ऐसी बात नहीं जानता जो मैं स्वच्छंदतापूर्वक समाज में न प्रकट कर सकूं, तो मेरी महत्ता वास्तविक समझी जावेगी, चाहे संसार मेरा रत्ती भर भी सम्मान न करता हो। दूसरा कर्तव्य जो बहुत विशद है-उन्नति की इच्छा है। जो मनुष्य उन्नति का उत्सुक नहीं है वह कभी पूज्य अथवा गरिमापूर्ण नहीं हो सकता। उन्नति के लिये प्रत्येक मनुष्य को अपनी ही समीक्षा बड़ी कड़ी दृष्टि से करनी चाहिए। जब तक कोई पुरुष अपने गुणदोष भली भांति से न जानेगा तब तक उचित उन्नति करने में सदैव अशक्त रहेगा। इसीलिये आत्मज्ञान हमारे यहाँ बहुत आवश्यक माना गया है। अपने गुणों तथा दोषों पर संभावित मनुष्य को सदैव पूरा ध्यान रखना चाहिए। गुणदोषों का ज्ञान प्राप्त करके उसे उचित है कि गुणों की वृद्धि और दोषों की क्षीणता सदैव करता रहे। समुचित उन्नति के लिये प्रत्येक सुधी को उचित है कि अपने गुणदोष, शक्ति, सामर्थ्य आदि पर पूर्ण समीक्षा करके अपने लिये कोई न कोई जीवन-लक्ष्य अवश्य बना लेवे। बिना लक्ष्य के उसके काम ऐसे ही भद्दे होते हैं जैसे किसी नियत स्थान पर पहुँचने का विचार न रखते हुए मनुष्य का मार्ग में चलना। देखने में तो यह बात बड़ी ही साधारण समझ पड़ती है, किन्तु जीवन-लक्ष्य रखकर काम करनेवालों की संख्या संसार में बहुत ही कम है, विशेषतया वर्त्तमान भारत में। इसलिये जीवन लक्ष्य पर ध्यान देने की प्रथा बहुत ही आवश्यक

समझनी चाहिए। जीवन-लक्ष्य निर्धारित कर लेने के पीछे मनुष्य को उसी के अनुसार विशिष्ट गुणों की उन्नति अपने में करनी चाहिए। संसार में विद्या का भंडार अटूट भरा है। यह कोष व्यय करने से बढ़ता और काम में न लाने से घटता है। प्रत्येक स्थान और समय पर विद्या आने के लिये द्वार पर खटखटाया करती है। जो मनुष्य उस आवाज को सुनकर भी कपाट नहीं खोलता है, वही विद्या देवी के प्रसाद से विमुख रहता है। समाज में सहस्रों प्रकार के ज्ञानवृद्ध मनुष्य मिलते हैं वरन् नित्य सब जगह फिरते हैं। जो मनुष्य जिस विषय का ज्ञाता होता है उसे उससे पूर्ण प्रेम होता है। यदि उससे उस विषय की चर्चा की जाय तो वह बड़े ही चाव से अपना ज्ञान प्रगट करेगा। इस प्रकार विशेष श्रम किए बिना ही जिज्ञासु सहस्रों विषयों का ज्ञान केवल साधारण समाज से प्राप्त कर सकता है, यदि वह उन विषयों में उन्नति करने की कुछ भी कामना करे। फिर भी लोगों की दशा तेली के बैलवाली प्रायः देखी गई है। वे कोल्हू के वृत्त को छोड़कर कुछ जानना ही नहीं चाहते। यदि किसी ऐसे विषय की बातचीत चले जिसका उन्हें ज्ञान नहीं है, तो उस मौके को भाग्यदत्त न समझ कर यही कह बैठते हैं कि कहाँ की शुष्क विषयों की कोरी बकवाद निकाली। ऐसी चित्तवृत्ति अपनी उन्नति के मार्ग में काँटे बोने का काम करती है। इसलिये उन्नति में जीवन-लक्ष्य पर ध्यान रखते हुए भी वैवृद्धि को हाथ से कभी नहीं जाने देना चाहिए और समाज द्वारा सुगम उन्नति के मार्ग को कभी भुलाना उचित नहीं है।

मनुष्य के लिये प्रत्येक उन्नति का मूल कारण साधना है। बिना इसके उन्नति का होना प्रायः असम्भव है। साधना का अर्थ है एक ही लक्ष्य और अविश्रांत परिश्रम। बिना पूर्ण परिश्रम के किसी वस्तु का अच्छा ज्ञान होना कठिन है। दृढ़तापूर्वक परिश्रम करने की इच्छा और शक्ति का ही दूसरा नाम योग्यता है। जो मनुष्य बहुत योग्य क्लर्क है वह प्रत्येक विषय की सफलता के लिये पहले ही से 100 में 90 अंकों की योग्यता रखता है। बिना घबड़ाए हुए ढंग से काम करने की आदत सभी अवस्थाओं और दशाओं में कार्य-कुशलता की साधक है। साधना प्रत्येक प्रकार की अभीष्ट-प्राप्ति की जननी है। साधना वैविद्धि के प्रतिकूल नहीं है वरन् यही प्रकट करती है कि सब ओर ध्यान रखते हुए भी जिज्ञासु अपने मुख्य विषय से कभी न हटे।

यहाँ तक हमने कर्त्तव्य के लिये सत्यनिष्ठा, उन्नति की इच्छा और साधना की मुख्यता कही है। इनके अतिरिक्त अनेकानेक विषय इसके लिये आवश्यक हैं यहां तक कि पूरा आचारशास्त्र कर्त्तव्यही के भीतर आ जाता है, तथापि हमारे विचार में उपरोक्त तीनों बातों की मुख्यता अवश्य समझनी चाहिए। इन तीनों गुणों को ध्यान में रखते हुए जिज्ञासु कर्त्तव्य-मार्ग से विचलित नहीं हो सकता। इन मुख्य सिद्धांतों के पीछे कुछ अमुख्य विषय भी ऐसे हैं जो कर्त्तव्य-परायण मनुष्य के लिये बहुत उपयोगी हैं। इनमें आज्ञा-पालन को सबसे पहले स्थान मिलता है। यह एक ऐसा विषय है जिस पर हमारे यहां बहुत प्राचीन काल से गड़बड़ होता चला आया है। वेद, शास्त्र, पुराण, पितर, वयोवृद्ध, कुलवृद्ध, धनवृद्ध, ज्ञानवृद्ध आदि अनेकानेक प्रकार के ग्रंथ और मनुष्य अपनी अपनी आज्ञाएँ प्रचारित कर चुके हैं और कर रहे हैं। ये

सब हम से अपनी अपनी आज्ञाओं की पालन कराना चाहते हैं। सबका कथन यही है कि ये आज्ञाएँ हमारे ही हित के लिये हैं, किन्तु इन आज्ञाओं में स्थान-स्थान पर ऐसा विरोध पड़ता है कि इन सबके पालन करने की इच्छा रखनेवाले के लिये भी इनका पालन अत्यन्त कठिन है। वेद शास्त्रादि का कथन है कि हमारी आज्ञा न पालने का दंड घोर पातक और समय पर नर्कगमन अथवा अन्य कष्ट हैं। समाज अपनी आज्ञा न माननेवाले को सामाजिक बहिष्कार तक का दंड दे सकता है और कभी-कभी कुछ काल के लिये देता भी है। इसी भांति अन्य आज्ञाभंगों के दंड हैं। इधर ईश्वर ने बुद्धि और अनुभव शक्ति काम में लाने के लिये दी हैं। यदि इनकी कोई आवश्यकता न होती तो स्यात् ये हमें मिलती ही नहीं। मनुष्य और पशु में इन्हीं बातों का प्रधान अन्तर है। जो मनुष्य इन शक्तियों से काम नहीं लेता वह अपने को पशुओं से बहुत श्रेष्ठतर नहीं रखता। फिर यदि प्रत्येक आज्ञा आज्ञापित पुरुष की समीक्षा के अधीन हो जावे तो संसार से अनेकानेक सद्विषयों और उन्नतियों का अतिशीघ्र अभाव हो जाना न केवल संभव वरन् निश्चित है। संसार ने सारे गड़बड़ों का मिटाने वाला आज्ञापालन का ही नियम है। इसका स्वतंत्रता से सहज विरोध है, किन्तु फिर भी बिना इसके कोई भी सद्गुण यहां तक कि स्वयं स्वतंत्रता भी संसार में नहीं आ सकती। कहते ही हैं कि जो मनुष्य कभी अच्छा आज्ञाकारी नहीं रहा है वह अच्छा शासक नहीं हो सकता। इन कारणों से इस बात पर विचार परमावश्यक है कि कहाँ तक आज्ञापालन का नियम मान्य है और कहाँ से स्वतंत्रता का साम्राज्य चलता है। कर्त्तव्यशास्त्र के लिये इस अन्तर का ज्ञान परमावश्यक है। अतः इस पर भी यहां कुछ विचार होगा।

यह बात तो प्रत्यक्ष ही देख पड़ती है कि स्वतंत्रता पर सब जीवधारियों का सहज अधिकार है। किसी को यह अधिकार नहीं है कि निष्कारण किसी पर अपना आतंक अथवा प्रभुत्व जमावे। फिर भी रोगी वैद्य की आज्ञाओं को अपने ही हित के लिये मानता है। वैद्य के आज्ञोल्लंघन से उसकी कोई हानि नहीं है, प्रत्युत् रोगी ही अपनी दशा बिगाड़ता और मरण तक को प्राप्त हो सकता है। बालक पर उसके पिता, पालक, अध्यापक आदि जो आज्ञाएँ चलाते हैं उनसे उनका कोई हानि-लाभ नहीं है, प्रत्युत् उनके न मानने से बालक ही अवनति करेगा और संकट में पड़ेगा। सेनापति अथवा कोई अन्य नेता अपने अधीन लोगों पर जो आज्ञा चलाता है उससे उन सभी की भी मंगल-कामना तथा संसार-पारिचालन का तथा संसार-पारिचालन का अभीष्ट होता है। नेतागण को आज्ञाएँ प्रचारित करने में इन्हीं बातों पर ध्यान रखना चाहिए न कि आत्मगौरव पर। यहाँ तक आज्ञापालन प्रत्येक मनुष्य का धर्म है और ऐसे आज्ञा-भंग से आज्ञोल्लंघनकारी की कर्त्तव्य-परायणता में क्षति पहुँचती है। अतः आज्ञापालन यहां तक उचित स्वतंत्रता का बाधक नहीं है।

-(शेष अगले अंक में)

सत्साहित्य का प्रचार-प्रसार राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

गतांक से आगे

विरजानन्द प्रकाश

लेखकः भीमसेन शास्त्री विद्याभूषण

अलवर में दण्डी जी के तीन शिष्य 1- नरेश, 2- अंगदराम (बदरिया निवासी), 3- प्रेमसुख (अलवरवासी) तो उनसे नित्य पढ़ते ही थे। अवश्य ही कुछ अन्य लोगों ने भी अध्ययन किया होगा, पर इस विषय में हमें कुछ ज्ञात नहीं है। अध्यापन से बचा समय भगवद्-भक्ति, चिन्तामनन में यापित होता था।

अलवर का सरस्वती भण्डारागार अपने सुविकसित रूप में तो बहुत पीछे आ सका होगा। दण्डी जी के अलवर निवासकाल में उसका प्रांजल प्रारम्भ सम्भवतः हो चुका होगा। उसके सुविकसित रूप में दण्डी जी की शिक्षा ने पर्याप्त भाग लिया होगा।

प्रज्ञाचक्षु जी की उज्ज्वल मेधा, शास्त्रपारदर्शिनी मति तथा सूक्ष्मेक्षिका को देखकर तथा इससे भी अधिक महाराज विनयसिंह की उनके प्रति अपार श्रद्धा को देखकर अलवरीय पण्डितगण सदा उनके प्रति द्वेष-पारायण रहते थे। उनसे जब तब दण्डी जी का शास्त्रार्थ भी छिड़ जाता था और प्रायः वे सब परास्त होते थे, पर अलवर निवास काल तक विरजानन्द मथुरावत् परिनिष्ठित न हो पाए थे-अतः यदि कभी भूले-भटके किसी-न-किसी प्रकार वे इनको निग्रह स्थान में ला पाते थे तो सातिशय प्रफुल्ल होते थे। अनेक उच्चतम विद्वानों से निरन्तर संघर्ष की अनेक वर्ष पर्यन्त स्थिति ने अवश्य ही विरजानन्द की शास्त्रमल्लता को सुविकसित किया होगा और वे कुछ वर्ष पश्चात् मथुरा पहुंचने तक अजय विचार-मल्ल बन गए थे।

स्वामी विरजानन्द जी सरस्वती का मनुष्य जाति को सर्वश्रेष्ठ दान है "आर्ष ग्रन्थों की उपादेयता का सिद्धान्त"। इस सिद्धान्त का बीज-वपन तो व्याकरण विषय में स्वा0 पूर्णानन्द जी ने किया था। हम काशी के वृत्तान्त में देख चुके हैं कि स्वामी विरजानन्द को शब्दानुशासन (अष्टाध्यायी) के कुछ अंश अवश्य कण्ठस्थ थे। सो, आरम्भ तो इस विचार का व्याकरण के आर्ष ग्रन्थ (शब्दानुशासन तथा महाभाष्य), कि अनार्ष ग्रन्थों की तुलना से हुआ था, पर इस समय तक यह विचार अधिक व्यापकता प्राप्त कर चुका था। तथापि यह विचारधारा अभी पूर्ण परिपाक से बहुत दूर थी। हम मथुरा वृत्तान्त के वर्णन में इस प्रसंग की पुनः चर्चा करेंगे।

श्री दण्डी का अलवर-निवास प्रायः 3॥ वर्ष रहा होगा। सर्वत्र अप्रधृष्य तेजस्वी नरेन्द्र विनयसिंह पण्डितजन के साथ प्रायः विनम्र रहते थे, पर दण्डीजी के साथ तो वे अतीव त्रस्त-भाव से बरतते थे। उनका अध्ययन अनवच्छिन्न नियमित रूप से चलता रहा। उनको राज्य में प्रतिवर्ष जन-सम्पर्क-यात्रार्थ भी जाना पड़ता होगा। इन दौरों के समय में सम्भवतः दण्डी जी भी साथ जाते होंगे। हां, दो-चार दिन को विनयसिंह जी कहीं अलवर से बाह्य जाते होंगे तो सम्भवतः अवकाश मांग कर जाते होंगे। विजयादशमी आदि पर्व तथा अन्य विशिष्ट अवसरों पर तो अनध्याय रहता ही होगा। दण्डी जी ने विनयसिंह को

शब्दबोध, रघुवंश, विदुर प्रजागर, तर्क-संग्रह आदि पढ़ाकर अच्छा संस्कृतज्ञ व संस्कृतभाषी बना दिया था।

हम ऊपर कह आये हैं कि प्रायः 3॥ वर्ष विनयसिंह का अध्ययन नियमित रूप से अनवच्छिन्न चलता रहा। पर एक दिन दण्डी जी राजप्रासाद में यथानियम नियत समय पर शिविकारूढ़ होकर पहुंचे, पर विनयसिंह बिना सूचना अनुपस्थित थे। विरजानन्द उचित समय तक प्रतीक्षा कर, क्षुब्ध हो, स्व-स्थान पर चले आए और अलवर-त्याग का दृढ़ संकल्प कर लिया।

विनयसिंह स्व-वचन-भंग से अनुतप्त थे और पूज्य गुरुवर्य का अलवर-त्याग-संकल्प जान अत्यन्त सन्तप्त और मर्म-विद्ध हुए। यद्यपि वे जानते थे कि गुरुदेव एक बार निश्चय करके कदापि बदलेंगे, पर उन्होंने स्वयं दण्डी जी के स्थान पर उपस्थित होकर अननुय-विनय में, क्षमा-याचना में कोई कोर-कसर न रखी, पर दण्डी जी अपने संकल्प पर पर्वतवत् दृढ़ रहे। सरल शब्दों में कह दिया "अब मैं यहां नहीं रह सकता।" वचन-व्यतिक्रम होने पर न आपको रोकने का विचार करना उचित है और न मुझे रुकने का। और उसी समय घर में उपस्थित फल मंगाकर उनको आशीर्वाद दिया। अलवर नरेश ने 2500) की स्वर्ण मुद्रायें मंगाकर भेंट कीं। दण्डी जी इन स्वर्णमुद्राओं तथा आवश्यक पुस्तकादि सामग्री लेकर दूसरे दिन प्रभात शिष्य अंगदराम के साथ भरतपुर को चल पड़े। कहते हैं शीघ्रतावश अनेक पुस्तकें तथा पर्याप्त रुपया भी वहां रह गया।

सब लेखकों ने माना है कि अपने जपानुष्ठान से विनयसिंह को पुत्र-रत्न प्राप्त कराने वाले मतिराम ब्राह्मण के अत्यधिक सत्कार से विरजानन्द अलवर से विरक्त हो गए थे। पर यह नितान्त असत्य है। दण्डी जी अलवर से सं0 1892 के उत्तरार्द्ध में चले गये थे और विनयसिंह के पुत्र शिवदानसिंह का जन्म सं0 1902 भाद्र शु0 13 रवि0 (14-1-1845 को) अर्थात् दण्डी जी के जाने के प्रायः दस वर्ष पश्चात् हुआ। अतः अमतिराम की सविशेष-राज-प्रसाद भाजनता निश्चय ही दण्डी जी की अलवर विरक्ति का मूल न थी।

शिवदानसिंह के जन्मकाल तक दण्डी जी मथुरा पहुंच चुके थे। सम्भव है उक्त सत्कार का व्यतिकर सुन उन्होंने कहा हो-'एक अविद्वान् इतने अधिक सत्कार का अधिकारी न था।' पर इस बात का अलवर त्याग से दूर का भी सम्बन्ध नहीं है।

अलवर नरेश का राज्यकाल अतीव संकटमय परिस्थितियों से भरा हुआ था। ब्रिटिश शासन की आज्ञा से सं0 1883 में राज्य के पर्याप्त उत्तरी भाग का पृथक् राज्य बन गया था। इन बलवन्तसिंह की राजधानी तिजारा थी। सुना जाता है कि दण्डी जी की उत्तम सम्मतियों ने विनयसिंह का अनेक कठिन परिस्थितियों से उद्धार किया था।

अलवर अद्भुतालय में एक कलमी चित्र मिला है। उस पर नामोल्लेख नहीं है। अनुमान किया गया है कि वह दण्डी जी का चित्र है। चित्रकला विशेषज्ञों को देखना चाहिये कि इसका दण्डी जी के प्रसिद्ध चित्र से आकृतिसाम्य है अथवा नहीं।

दण्डी जी का स्वर्गवास 90 वर्ष की आयु में हुआ। उनके शव का चित्र लिया गया था। उसी के

आधार पर दण्डी जी के शिष्य जुगलकिशोर जी ने विरजानन्द जी का बैठा हुआ कलमी चित्र बनवाकर प्रकाशित किया था।

पूर्व कलमी चित्र यदि दण्डी जी का है तो वह चित्र दण्डी जी को 57 वर्ष की अवस्था में देखने वाले किसी मुसलमान चित्रकार द्वारा कुछ समय पश्चात् बनाया गया है। दण्डी जी के अलवर त्यागने पर यह विनयसिंह ने बनवाया होगा।

मुसलमान चित्रकार दण्डी जी को यज्ञोपवीत पहनाने की भूल कर सकता है। अनेक वैरागी आदि हिन्दू साधु यज्ञोपवीत पहनते हैं। मुसलमान, हिन्दू-साधुओं के सूक्ष्म-वेशभूषा-भेदों से अभिज्ञ न हों तो कोई बड़ी बात नहीं। यदि चित्र-कला के पारखी दूसरे चित्र से आकृतिसाम्य पाते हैं तो यज्ञोपवीत मात्र से वह त्याज्य नहीं हो सकता अपितु सर्वथा उपादेय है।

अलवर से सोरों की यात्रा
(सं0 1892-1893)
(मार्ग में भरतपुर, मुरसान, बेसवां का निवास)

अलवर से भरतपुर 78 मील है। श्री दण्डी जी स्वशिष्य अंगदराम सहित डीग व कुम्हेर होते हुये भरतपुर पहुंचे। नाम संकीर्तन-मात्र से दुर्दान्त वैरियों के हृदय में हड़कम्प मचा देनेवाले वीराग्रणी श्री महाराजा सूर्यमल्ल (सूरजमल) के वंशधर महाराजा बलवन्तसिंह अंग्रेजों की सहायता से सं0 1882 के अन्त में सिंहासनासीन हुए थे। उन्होंने श्री दण्डी जी का अच्छा सत्कार किया। दण्डी जी यहां छैः मास रहे। चलते समय भरतपुराधीश्वर ने 400) तथा एक वरीयान् (बढ़िया) दुशाला भेंट किया।

भरतपुर से प्रस्थित होकर दण्डी जी मथुरा होते हुए अंगदराम सहित मुरसान पहुंचे। यहां राजा साहब श्री टीकमसिंह ने अनेक दिन उनका सत्कार किया। मुरसान से चलकर वे बेसवा के राजा गिरधरसिंह जी के कुछ समय अतिथि रहे। तदनन्तर बेसवां से मुरसान होते हुए सोरों पधारे।

इस समय सम्भवतः 1893 संवत् चल रहा था।

शूकर क्षेत्र-द्वितीय निवास
(सं0 1893-1902)

सौकरव (सोरों) आकर श्री दण्डी जी अपने पूर्वोषित विश्रान्त घाट पर एक पृथक् स्थान में रहने लगे। अंगदराम आदि छात्र उनके पास पढ़ने लगे। प्रायः प्रतिदिन कोई सम्पन्न महानुभाव आपके दर्शन को आते और श्रद्धापूर्वक भेंट धर जाते। इस प्रकार आपको व्यय की कोई कठिनता न थी। सर्व प्रकार का सुख था। अब आपका कहीं जाने का विचार न था। सदा के अभ्यासानुसार अध्यापन, मनन तथा भगवच्चिन्तन की शोभन वृत्ति से जीवन का सदुपयोग हो रहा था। इनके कारण विश्रान्त का महत्व बढ़ गया था। अतः वहां के अध्यक्ष इनसे बहुत प्रसन्न थे।

इसी प्रकार सोरों में पढ़ाते अनेक वर्ष व्यतीत हो गए। उनका जीवन अति पावन कार्यों में लग रहा था, तथापि उन्हें सन्तोष न था। सर्वत्र दम्भ, पाखण्ड का विस्तार और विद्या के नाम पर अविद्या का प्रचार हो रहा था। धर्म की ओट में प्रायः अधर्म का अनुष्ठान चल रहा था। देश की राजनीतिक पराधीनता प्रतिदिन बढ़ रही थी। आर्थिक अवस्था बिगड़ती जा रही थी। इस सबको देखकर विरजानन्द का हृदय अतीव व्यथित था। वे नेत्रहीन होने से, अपने को विद्या व धर्मक्षेत्र में भी अनीति-निवारण में सर्वथा अकिंचित्कर अनुभव करते थे। अन्तर्वेदना उन्हें अधिकाधिक व्यथित करने लगी और वे मर्मन्तुद पीड़ा अनुभव करने लगे। वे सोचने लगे कि सवा छियासठ वर्ष के वय तक मैं कुछ न कर सका तो आगे जरा-जीर्ण अवस्था में क्या कर पाऊंगा।

घोर दुश्चिन्तता से आपको ज्वर हो गया। तीन दिन लगभग निश्चेतनता में बीते। चौथे दिन कुछ चेतना हुई। उस दिन आपने अध्यापन किया। परिश्रान्ति से ज्वर ने प्रचण्डरूप धारण कर लिया। अनेक दिन पुनः मूर्च्छितप्राय रहे। ग्यारहवें वा बारहवें दिन पुनः चेतना हुई। जीवन की आशा न रही थी। अब आपने अपना सर्वस्व विद्यार्थियों में बांट दिया। फिर कहा "इस शरीर को गंगा जी की धारा में प्रवाहित कर देना" इससे अधिक कुछ न कह सके।

इस अचेतन-प्रायः अवस्था में दो तीन दिन और व्यतीत हो गए। दशा गिरती हुई प्रतीत हो रही थी। दण्डी जी एक वात्सल्य भाजन शिष्य ने अवशिष्ट सर्वस्व ले लिया। एक किराये का छकड़ा लेकर उसमें अचेतन दण्डीजी को लिटा दिया। लिटाकर एक चादर से ढक दिया। गाड़ी वाले से कह दिया-धारा पर ले जाओ। यदि मार्ग में प्राण छूट जाएं तो धाराजी में डाल देना। यदि जीवित रहें तो तीर पर उतार देना। गाड़ी वाला दण्डी जी को प्रभात में ही लेकर चला था। धारा सोरों से प्रायः चार मील है। वह नौ बजे के लगभग गंगा तीर पर पहुंच गया। वह निर्णय न कर सका कि शरीर में प्राण हैं या नहीं, अतः उसने श्री दण्डी जी को किनारे पर ही उतार दिया तथा सम्पूर्ण दिवस वे उसी अवस्था में पड़े रहे।

सोरों में उन दिनों एक सेवा-परायण उत्तम साधु मथुरादास वैरागी थे। इन्होंने वैष्णव साधुओं के लिये दो स्थान बनवाए थे। एक तो सोरों में अम्बागढ़ के पास। यह अब भी विद्यमान है। दूसरा स्थान सोतुआ ग्राम में धारा (गड़िया घाट) पर था। यह स्थान अब धारा ने काट दिया है। दोनों स्थान "मथुराजी की गढ़ी", "मथुरादास जी की कुटी" अथवा "वैष्णव साधु छावनी" अथवा "छावनी" मात्र कहे जाते थे। गढ़ियाघाट की छावनी में 100-200 साधु बने ही रहते थे। इस बृहत् संख्या में से एक-दो साधुओं का किसी-न-किसी कार्य से, धरा पर आते-जाते रहना स्वाभाविक ही था। उस दिन भी गढ़ी के एक साधु ने सायं समय के समीप श्री दण्डीजी को अचेतनावस्था में धारा पर पड़े देखा और उसने शीघ्रतर श्री महन्त मथुरादासजी को सूचित किया कि "एक संन्यासी मूर्छित अवस्था में पड़ा है।" सेवाव्रती मथुरादासजी समाचार सुनते ही पांच-सात साधुओं सहित वहां पहुंचे। आकर देखा तो पहचाना कि ये तो दण्डी जी हैं। उन्होंने नाड़ी देखी तो प्राण शेष थे। उन्होंने तुरन्त एक अच्छी खट्वा मंगाई और उस पर लिटाकर उनके शरीर के कुछ भाग को एक चादर से ढककर उन्हें गढ़ी में ले आए। रात्रि भर समझदार साधुओं की देखभाल में उनको रखा।

-(शेष अगले अंक में)

सम्बन्ध-धर्म

लेखक: स्वामी सत्यानन्द महाराज

परमहंस श्री दयानन्द जी व्यावहारिक धर्म के एक उत्तम भाग-सम्बन्ध धर्म का पालन करना आवश्यक बताया करते थे। इस विषय पर वे प्रभावशाली भाषण दिया करते थे। सम्बन्ध-धर्म का जिसने पालन नहीं किया, उसमें जिसने त्रुटि दिखाई, वह दूसरे धर्मों में पूरा नहीं उतर सकता। यह धर्म तो दूसरे धर्मों के स्वर्गीय मन्दिर में जाने के लिए द्वार है। इसी से मनुष्य के आचार-विचार का, धैर्य-धारणा का, व्रत-नियम का, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का, यहाँ तक कि उसके अन्तरंग बहिरंग का पता लगता है। सम्बन्ध-धर्म के संग्राम-क्षेत्र ही में सत्यता, वीरता, निर्भयता, उदारता और विनीतता आदि दैवी गुण सम्पादन किये जाते हैं, तथा दुर्गुण-रूप दैत्यों पर विजय लाभ होती है।

श्रीमहाराज सम्बन्ध-धर्म का वर्णन करते हुए उपदेश देते हैं कि पुत्रों के साथ पिता का जो सम्बन्ध है, उसका पालन करने के लिए पिता को चाहिए कि अपनी सन्तान को सब प्रकार के योग्य बनावे। वे ही पितृ-जन उत्तम हैं जो सन्तानों को, अपने तन-मन-धन को भी समर्पण करके, उत्तम विद्या और व्यवहार सिखाते हैं, उनकी सदा श्रेष्ठ बनाने का यत्न करते हैं, आस्तिकता का और धर्म का उपदेश देते हैं। इस सम्बन्ध का पालन करने के लिए माता-पिता का कर्त्तव्य है कि सन्तान को विनय-धर्म का उपदेश करें, सुशीलता की शिक्षा दें और शिष्टाचार भी सिखायें। उनमें कुसंग-कुव्यसन और दुर्गुण न बढ़ने दें। जो माता-पिता अपने पुत्र-पुत्रियों को गाली देना सिखाते हैं, अपमान और निरादर की शिक्षा देते हैं, लाड़-प्यार में हठी और दुराग्रही बनाते हैं, पढ़ने लिखने से वंचित रखते हैं, वे सन्तानों के पक्के शत्रु हैं।

आचार्य का-धर्म-गुरु का-जो बर्ताव शिष्य के साथ होना चाहिए, उसका श्री स्वामी जी ने इस प्रकार वर्णन किया है-"आचार्य शिष्यों को ऐसी शिक्षा दे जिससे उसके शिष्यों में सत्यता, सरलता और सुकोमलता आदि गुण आ जायँ। वे आज्ञाकारी बनें, क्रोधी, हठीले अहंकारी और व्यर्थवादी न हों, सभ्य और सुयोग्य कहलावें, नम्रता का त्याग न करें, उपकारी जनों का आभार तथा कृतज्ञता मानें, पुरुषार्थी, साहसी और परोपकारी बने रहें। इन्द्रिय-दमन और सदाचार रूप शुभ कर्मों का सदा सेवन करें। शिष्य के साथ आचार्य का प्रेम अपार होना चाहिए।"

"सन्तानों और शिष्यों का उत्कृष्ट कर्त्तव्य है कि अपने पवित्र सम्बन्धों के पालन करने में कभी भी त्रुटि न दिखावें। गुरुजनों के विनीत अनुव्रती बनें। उनका सदा प्रिय आचरण करें और कथन मानें। अपना सर्वस्व लगाकर भी उनको सुख तथा सन्तोष दें।"

भाई-बहिनों के परस्पर, सम्बन्ध-धर्म को पालने के लिये बन्धु-भावना, हितकामना, आदर-सम्मान

और प्रेम-प्रीति होनी चाहिए। ईर्ष्या द्वेष और विरोध न हो। एक दूसरे की सहायता देने में संकोच न करें। सीधा, सरल बर्ताव और कर्त्तव्य-पालन भ्रातृ-भाव के महावृक्ष का मूल है।

सांसारिक सम्बन्धों में पति-पत्नी का सम्बन्ध एक पवित्र और अत्युत्तम सम्बन्ध है। इसके पालन करने में बड़ी सावधानी रखनी चाहिए। इस सम्बन्ध-को सुदृढ़ रखने के लिये स्वामी जी ने यों उपदेश दिया है-"पति पत्नी में से कोई भी कभी किसी का अप्रियाचरण न करें। जिस व्यवहार से एक दूसरे को कष्ट हो, उसको छोड़ दें। एक दूसरे के लिये सच्चे और सरल-स्वभाव हों। परस्पर ऐसा बर्ताव करें कि सुख और सुप्रसन्नता का अन्त न आने पावे। वे सेवा-धर्म, के पालन में तत्पर रहें। पुरुष का कर्त्तव्य है कि वस्त्राभरण आदि वस्तुओं से पत्नी को सुप्रसन्न रक्खें। घर के सारे काम-काज उसे सौंप दे। पत्नी का भी यह कर्त्तव्य है कि पति को खान-पान और प्रेम-भाव से सुखी बनावे, जिससे सन्तान हो और सुख बढ़ता चला जाय।"

"जिस कुल में-घर में-पति-पत्नी कलह नहीं करते किन्तु एक दूसरे से प्रसन्न और सन्तुष्ट रहते हैं, निश्चय रूप से, उसी कुल में कल्याण बना रहता है, परन्तु परस्पर का यह सम्बन्ध धर्म तभी स्थिर रह सकता जब ब्रह्मचर्य-धारण-पूर्वक विद्या एक दूसरे का प्रसन्नता से-स्वयंवर की रीति ऐसे विवाहों ही से सम्बन्ध-धर्म पलते हैं और उत्तम सन्तानें होती हैं। स्वयम्बर रूप प्रेममय विवाहों से तो जो सन्तानें होंगी, वे शूरवीर ही होंगी, प्रत्येक प्रकार से योग्य होंगी। ऐसे विवाहों की सन्तान के समान दूसरे विवाहों की सन्तान लाखों में कोई एक निकले तो निकले। स्वयंवर-सन्तान तो अपने बल से, पराक्रम से, धर्म-भाव से, सुशीलता से, शुभ लक्षणों से और बुद्धि के प्रभाव से अपने कुल की कीर्ति को चारों ओर फैला देती है।

पड़ोसी को पड़ोसी के साथ और स्वामी को सेवक के साथ सम्बन्ध कैसे निभाना चाहिए, इस विषय में श्री स्वामी जी के वचन ये हैं-"मित्रों को परस्पर अपने आत्मा के समान, प्राणों के समान बर्तना चाहिए। सत्य व्यवहार और धर्म-भाव में कभी भी भेद-भावना न आने दें। अपने पड़ोसियों को अपनी देह के तुल्य जानना चाहिए। सभ्य मनुष्य वैसा ही हित उनका करे, जैसा अपनी काया का करता है। स्वामी सेवक के साथ ऐसा बर्ताव करे जैसा वह अपने अंगों के साथ करता है। उसकी रक्षा करना उसका धर्म है। सेवक जन भी अपने स्वामियों को अपना जान सदा प्रसन्न रक्खें और उनका हित चाहें।"

सभा-समाजों में सम्मिलित होकर एक दूसरे से उचित व्यवहार करना बड़ा आवश्यक हुआ करता है। सभा के सभासदों की भाषा सुकोमल सभ्य और मीठी होनी चाहिए। सभा में गँवारूपन शोभा नहीं देता। संवादों में भी सत्य और सरलता का होना उचित है। अपने पक्ष का पोषण तो कोई भले ही करे, पर अधिक खींचातानी अच्छी नहीं होती। इससे वैमनस्य ही बढ़ा करता है। श्रीमहाराज सभा के सम्बन्ध में यों कहते हैं-

'जब कोई जन सभा में जाय तो पहले इस बात का सुदृढ़ संकल्प कर ले कि आज मुझे सत्यही की स्थापना करनी है, मिथ्यापक्ष को गिराना है। सभा में किसी बात का अभिमान न करे, न अपने आपको

बड़ा माने। संवाद में यदि दूसरा सभासद उसकी बात का–उसके पक्ष का–खण्डन कर दे, तो बुरा न माने। क्रोध न करे और न अप्रसन्नता ही दिखावे। अपनी प्रकृति में ओछापन न आने दे, दूसरे के कथन को–पक्ष को–ध्यान–पूर्वक सुने। उसमें जितना अंश ठीक न जँचे, उसका प्रतिवाद करे, और जो सत्य हो, उसे प्रसन्नता से स्वीकार कर ले। सभा में बड़ाई–छोटाई का विचार नहीं रखना चाहिए। व्यर्थ वाद करना अथवा मिथ्या पक्ष पर डट जाना सभा के नियमों के विरुद्ध है। परन्तु सत्य पर स्थिर रहना चाहिए। सभा में ऐसी रीति से आवे–जाय और उठे बैठे जिससे किसी को बुरा न लगे, और अशिष्टता न जान पड़े। सबके संवाद में, सभा के कार्यों में, सदा सर्वहित पर दृष्टि रक्खे। सज्जनों से मेल–जोल बढ़ावे। अपने सच्चे प्रणों को–अपनी प्रतिज्ञाओं को पूर्ण करने में कभी आलस्य और प्रमाद न करे।''

सभाओं में बहुत से वाद–विवाद इसलिये भी हुआ करते हैं कि काई सभासद अपना तो सुधार नहीं करते परन्तु दूसरों की समालोचना करने में बड़े वीर बने रहते हैं। अधिक सुधार तो स्वदोष देखने ही से होता है। इस पर स्वामी जी महाराज कहते हैं–''ऐसे भी बहुत मनुष्य हैं जिनको अपने दोष तो नहीं दिखाई पड़ते, परन्तु दूसरों के दोष देखने में वे सदा सुसज्जित रहते हैं। यह बात न्याय की नहीं। मनुष्य को चाहिए कि पहले अपने दोषों को देख–भाल कर निकाल दे, तब दूसरे के दोषों और दुर्गुणों पर दृष्टि डाले। जो कोई पक्षपात–वश होकर देखता है, उसे न तो अपने दोष दृष्टिगोचर होते हैं और न पराये ही।''

प्रेम–पूर्वक सुनने–सुनाने का जो सम्बन्ध है, उसे दत्त चित्त होकर पालन करना चाहिए। सत्संग में बैठकर शास्त्रों के उपदेश सुनने से जो लाभ होता है, उसका वर्णन महाराज ने इन शब्दों में किया है–''जैसे मनुष्य पढ़ने से पण्डित होता है, वैसे ही सुनने से बहुश्रुत हो जाता है। बहुश्रुत सज्जन यदि सुनी हुई बातें दूसरों को न समझा सके, तो भी आप तो उनसे अवश्य लाभ उठाता है। मनुष्य में सत्यासत्य को निर्णित करनेवाली बुद्धि विद्यमान् है। इस कारण सुने हुये ज्ञान का उपयोग कर वह सन्मार्ग को पा सकता है।''

❁❁❁

पृष्ठ सं0 4 का शेष–

स्रोत रिसते हैं, जल–प्रपात गिरते हैं। यह सब अचरजभरी महिमा ब्रह्म की ही है।

और देखो, ब्रह्म ने अपनी महिमा से ऊपर द्युलोक को थामा हुआ है। द्युलोक में हमारे सौरमण्डल का धारक सूर्य है, अनेक नक्षत्र हैं, जो वस्तुतः सूर्य ही है और जिनके अपने–अपने सौरमण्डल हैं, आकाशगंगा है, कृत्तिका, रोहिणी आदि हैं, सप्तर्षि हैं, ध्रुवतारा है, अन्य भी अनेक तारामण्डल हैं। इन सबको बिना डोर के परब्रह्म ने ही द्युलोक में धारा हुआ है।

यह तो प्राकृतिक महिमा वर्णित की गयी है। इसी प्रकार अध्यात्म महिमा का भी गान किया जा सकता है। मैं चाहता हूँ कि इस ब्रह्मौदन को मैं भी अपाने आत्मा में परिपक्व करूँ और उससे मृत्यु को तर जाऊँ। मृत्युभय से छूट जाना ही मृत्यु को तर जाना है। मृत्यु से छूटकर मरणोत्तर मोक्ष को पा लूँ।

❁❁❁

अनेक धर्मों की उत्पत्ति

लेखकः बाबू सूरजभान वकील

समय समय पर विचारवान् साहसी पुरुष उत्पन्न होते रहते हैं और उनके प्रकट किये हुए स्वतंत्र विचारों से मनुष्यजाति वस्तुस्वभाव को जानने, कार्यों के कारणों को ढूंढ़ने और तदनुसार कारणों को जुटा कर अपने कार्यों को सिद्ध करने की और झुकती रहती है। इस तरह वह नवीन नवीन कारणों को मालूम करके दिन पर दिन उन्नति करती जाती हैं। यद्यपि जब जब भी किसी साहसी पुरुष ने अपने स्वतंत्र विचार प्रकट किये हैं, तब तब ही धर्म के ठेकेदारों ने उनका विरोध किया है, सर्वसाधारण को उनके विरुद्ध भड़काकर महा उत्पात मचवाया है, और मनुष्य जाति की उन्नति में बहुत कुछ रोड़ा अटकाया है, तो भी यदि जल्दी जल्दी नहीं तो कभी कभी अवश्य ही ऐसे साहसी पुरुष पैदा होते रहे हैं जो अपनी जान पर खेलकर मनुष्य को आगे बढ़ाते और विचारवान् बनाते रहे हैं, अर्थात् वे अपनी विचारशक्ति से काम लेना सिखाते रहे हैं और स्वतंत्रता का पाठ पढ़ाते रहे हैं। इन्हीं सच्चे परोपकारी पुरुषों या अवतारों की बदौलत मनुष्यजाति इतनी उन्नति कर लेती है कि अब उसके मन में यह विचार उठने लगता है कि इस संसार में भिन्न भिन्न प्रकार की अनेक वस्तुयें होती हैं। जैसे एक तो मनुष्यादिक जिनमें जान है और जो अपनी इच्छानुसार चलते फिरते हैं, दूसरे मिट्टी, पत्थर, लोहा, लकड़ी आदि वे पदार्थ जिनमें जान नहीं है, तीसरे सूर्य, चन्द्र, नदी, नाले, आँधी ओले, वर्षा बीमारी और मृत्यु आदि के देवता। इनके सिवा और भी कई प्रकार की चीजें नजर आती हैं, परन्तु ये सब अपअने नियमित स्वभाव के अनुसार ही काम करती हैं। इस कारण इन सबको पैदा करनेवाला, इनको भिन्न भिन्न प्रकार की नियति शक्ति देनेवाला और इनको पृथक् पृथक् रीति से चलानेवाला 'कोई एक' अवश्य ही होगा। अर्थात् अब उसको एक परमेश्वर का ख्याल आने लगता है। परन्तु देवताओं के प्रकोप और सर्वसाधारण के विरोध के डर से लोग पहले अपने इस ख्याल को सर्वसाधारण पर प्रकट करने का साहस नहीं करते हैं, एक तरह से उसे भुलाये ही रहते हैं।

परन्तु मनुष्य की विचारशक्ति उसका एक स्वाभाविक गुण होने के कारण लाख दबाने और भुलाने पर भी यह खयाल उसके मन में आन्दोलन मचाता ही रहता है और यद्यपि भय के कारण इस खयाल के पकने में सैकड़ों वर्ष लग जाते हैं, फिर भी वह दिन पर दिन प्रौढ़ ही होता जाता है। इसके बाद कभी कोई मनुष्य साहस करके बहुत गुप्तरीति से अपने किसी बहुत प्रिय और विश्वस्त मित्र को उक्त खयाल सुनाता है। आखिर होते होते दस बीस और पचास मनुष्य ऐसे हो जाते हैं जिनको यह खयाल पसन्द आ जाता है और वे आपस में इस विषय पर चर्चा करने लग जाते हैं। इसके उपरान्त वे लोग अपने में से किसी अधिक साहसी और विद्वान पुरुष को एक सर्वशक्तिमान् परमेश्वर का उपदेश देने के लिए खड़ा कर देते हैं। जिस समय उक्त साहसी पुरुष ने अपना एक परमेश्वरविषयक खयाल लोगों पर प्रकट

किया होगा उस समय अवश्य ही एकदम बड़ा भारी उपद्रव खड़ा हो गया होगा। उस समय के संत, महन्त, धर्मात्मा, पुजारी और भगत लोग भड़क उठे होंगे, धर्मयुद्ध का बीड़ा उठाया गया होगा और देवी–देवताओं के कुपित हो जाने के भय से चारों ओर से मारो मारो धर्मविद्वेषियों को मारो, की आवाज आने लगी होगी। ऐसी दशा में उन चालीस पचास मनुष्यों से भी जो कायर डरपोक होंगे सर्वसाधारण में मिल गये होंगे और उस बेचारे के साथ दो चार आदमी ही नजर आते होंगे। लाचार, उस अगुआ पुरुष को अपनी रक्षा के लिए अनेक प्रकार के मायाचार और युक्तियों से काम लेना पड़ता है और वह अपने को परमेश्वर का प्यारा प्रकट करके कहने लगता है कि "मुझे परमेश्वर ने स्वप्न में दर्शन देकर या साक्षात् प्रकट होकर आदेश दिया है कि अब तक मुझ परमेश्वर को न मानने के कारण ही लोगों के अनेक कार्य बिगड़ते रहे हैं। अब जो कोई मुझको मानेगा उसके सारे कार्य अवश्य ही सिद्ध होते रहेंगे और जो नहीं मानेगा उसका सर्वनाश हो जायगा। इसके सिवाय मेरे इस प्यारे भगत के साथ जिसके द्वारा मैं प्रकट हुआ हूँ, जो कोई किसी प्रकार का दंगा–फसाद करेगा वह बहुत ही ज्यादा नुकसान उठावेगा और जो इसकी सहायता करेगा वह मेरी कृपा का पात्र बन जायगा।" इसके साथ साथ वह लोगों की यह तसल्ली भी करता रहता है कि जिन देवी–देवताओं को तुम इस समय मान रहे हो उनका मैं निषेध नहीं करता हूँ और न उनके मानने–पूजने को ही मना करता हूँ, बल्कि मैं उन्हीं के साथ साथ उसके सबसे बड़े अफसर अर्थात् एक परमेश्वर के पूजने की सलाह देता हूँ कि जिसकी पूजा के बिना अभी तक तुम्हारे सब कार्य बिगड़ते रहे हैं। ऐसी बातों को सुनकर लोगों को बहुत बड़ी शंका उत्पन्न हो जाती है और आहिस्ता आहिस्ता लोग उसके साथी होने लगते हैं। फिर बढ़ते बढ़ते दो दल हो जाते हैं। अर्थात् एक तो पहले पुजारियों का दल जो केवल पुरानी देवी–देवताओं को ही मानता है और उन देवताओं के अफसर अर्थात् परमेश्वर को स्वीकार नहीं करता है, और दूसरा नवीन दल जो पुराने देवी–देवताओं को पूजने की भी सलाह देता है और उन सब देवताओं के मालिक एक परमेश्वर को भी स्वीकार करता है।

पुराने दलवालों की ओर से पूरी पूरी खींचातानी और विरोध होने के कारण इन दोनों दलों में बड़ी भारी शत्रुता उत्पन्न हो जाती है, यहाँ तक कि एक दलवाला दूसरे दलवाले का जानी दुश्मन बन जाता है और दोनों दलवाले अपने अपने पक्षवालों का बहुत प्रबल पक्षपात करने लगते हैं। ऐसी हालत में नया पक्ष थोड़ा और पक्षपात करने लगते हैं। ऐसी हालत में नया पक्ष थोड़ा और कमजोर होने के कारण बहुत नुकसान उठाता है, तो भी पुराने दल के द्वारा चिढ़ाये जाने के कारण इन लोगों को भी ऐसी जिद पड़ जाती है कि धक्के–मुक्के खाते हुए भी वे अपनी बात पर कायम रहते हैं और जी तोड़कर–अपना सर्वस्व लुटाकर भी उनका सामना करते रहते हैं। ज्यों ज्यों उनके नेता की बेइज्जती की जाती है त्यों त्यों उनका जोश बढ़ता जाता है और यदि संयोग से वह मारा जाता है तो फिर उनकी जिद की सीमा ही नहीं रहती है और वे अपना जान–माल सब न्योछाबर करके अपनी बात पर अड़ जाते हैं।

इस प्रकार एक परमेश्वर तो स्थापित हो जाता है और उसकी पूजा भी होने लगती है, परन्तु यह

बात तय नहीं हो पाती है कि उस परमेश्वर का क्या लक्षण है, वह क्या काम करता है और अन्य देवताओं से उसका क्या सम्बन्ध है। इस कारण विचारशील पुरुषों के मन में इस समबन्ध में अनेक कल्पनायें उठती रहती हैं, परन्तु वे उनको इतर लोगों के भय से जबान पर नहीं लाते हें। ये सब विचार मन-ही-मन में उठते और लय होते रहते हैं। कुछ समय के उपरान्त फिर कोई साहसी पुरुष खड़ा होता है और वह इन बातों को खोल देता है; परन्तु वह भी अपनी बात सुनी जाने और अपनी जान के बचाने के लिए बहुधा कोई प्रबली मायाजाल रचकर ही आता है और अपने को ईश्वरप्रेरित या ईश्वर का प्रतिनिधि बतलाता है।

एक ईश्वर का आविर्भाव होने के सैकड़ों वर्ष बाद देवताओं की मान्यता के साथ साथ एक ईश्वर मानने का मत भी मनुष्यों में बहुत कुछ फैल जाता है। इतने समय के पश्चात् शायद ही कोई ऐसा रह जाता हो जो एक परमेश्वर को न मानता हो, बल्कि इतने समय में मनुष्यों को वस्तु-स्वभाव और कार्य-कारण सम्बन्ध का बहुत कुछ अनुभव हो जाने के कारण उनकी श्रद्धा बहुत से देवी-देवताओं से हटने लगती है और उनके मन में परलोकसम्बन्धी भी बहुत से प्रश्न उठने लगते हैं। इस कारण अब ऐसे विचारशील और साहसी पुरुष पैदा होने लगते हैं जो कुछ देवताओं का तो बिलकुल निषेध करते हैं और कुछ देवताओं को स्वल्पशक्ति कहकर बहुधा एक ईश्वर की ही महिमा गाते हैं। यही नहीं, वे उस परमेश्वर की कुछ ऐसी विशेष आज्ञायें बतलाते हैं कि जिनमें ऐसे ऐसे कामों के करने की हिदायतें रहती हैं जिनको उस समय के लोग जातीय सुख के लिए जरूरी समझते हों और ऐसे ऐसे कामों के करने की मनाही रहती है जिनसे उस समय के लोग घृणा करते हों। फिर ये लोग परलोक की स्थापना करके यह निश्चय कराते हैं कि जो आदमी परमेश्वर की इन आज्ञाओं के अनुसार चलेगा वह मरने के बाद ऐसे स्थान में भेजा जायगा जहाँ सुख ही सुख रहता है, और जो आदमी इन आज्ञाओं को भंग करेगा वह ऐसे स्थान में भेज दिया जायगा जहाँ दुःख के सिवा सुख का नाम नहीं है। वे इन स्थानों का नाम स्वर्ग और नरक रखकर उनका स्वरूप भी उसी समय के विचारों के अनुसार बतलाते हैं। अर्थात् उस समय के लोग जिन जिन बातों को सुखदायक समझते हैं और जिनकी प्राप्ति के लिए लालायित रहते हैं उनकी प्राप्ति स्वर्ग में बहुत सुगम बतलाई जाती है, और जिन बातों से वे डरते हैं और जो दुःख वे अपने शत्रुओं को देना चाहते हैं, उन सब दुःखों का होना नरक में ठहराते हैं।

इस प्रकार परलोक की स्थापना भी हो जाती है और फिर समय समय पर उसके स्वरूप में अदल-बदल भी हुआ करती है। इसके बाद पशु-पक्षियों में भी वही जीव-वही आत्मा माना जाने लगता है जो मनुष्यों में है, अर्थात् यह मनुष्य आवागमन के सिद्धान्त का स्वीकार करके एक ही जीव का घोड़ा गधा, कीड़ा-मकोड़ा और मनुष्य आदि अनेक योनियों में पैदा होना मान लेता है; परन्तु इतनी उन्नति कर लेने पर भी वह अपने पुराने देवी-देवताओं, भूत-प्रेतों और जंत्रों-मंत्रों का मानना सर्वथा नहीं त्यागता है। क्योंकि जो उपदेशक नवीन बातों का प्रचार करने के लिए सर्वसाधारण के सम्मुख आता है वह लोगों के भय से सभी प्रचलित बातों का खंडन नहीं करता है, बल्कि 'येन केन प्रकारेण' उन्हीं पर अपनी नवीन

बातों का 'थेगरा' या पैबंद लगाता जाता है। फल इसका यह होता है कि जिस विरोध से वह बचना चाहता है वह तो अवश्य उठता ही है, साथ ही पुरानी बातों को सच बतलाने के कारण वह अपने नीवन सिद्धान्तों को भी ठीक-ठीक नहीं बिठा सकता है और नये पुराने सभी सिद्धान्तों का समर्थन करके एक प्रकार की गड़बड़ी पैदा कर देता है। कुछ दिनों के पश्चात् ये नये पुराने सिद्धान्त मिलकर एक अद्‌भुत रूप धारण कर लेते हैं, या उनके अनेक रूप बन जाते हैं, अर्थात् उनमें से कोई किसी बात को मानने लगता है और कोई किसी को। होते होते इन बातों में धार्मिक तत्व कुछ नहीं रहता है और भोले लोग उनके बाह्य स्वरूप का पालन कर देना या बेगारसी टाल देना ही यथेष्ट समझते हैं। इसीलिए वे अनेक विरोधी सिद्धान्तों के मानने और उनका पालन करने में कुछ भी हर्ज नहीं समझते हैं।

इस भारतवर्ष में ही देख लीजिए कि आवागमन या पुनर्जन्म के सिद्धान्त, अर्थात् जीव के लाखों योनियों में भ्रमण करने के सिद्धान्त को मानते हुए, और बड़ी बड़ी बारीक तात्त्विक बातों और अनेक दार्शनिक सिद्धान्तों के भेदों पर खूब जोर के साथ बहस करते हुए भी बड़े बड़े विद्वान पुरुष साथ साथ में ऐसी अनोखी बातें भी मानते हैं कि हमारे सभी मरे हुए पूर्वज कुंआर महीने के कृष्णपक्ष में अर्थात् श्राद्ध के दिनों में अपनी अपनी संतानों के घर भोजन लेने आते हैं और उन दिनों में उनके नाम से जो कुछ ब्राह्मणों को खिलाया जाता है उससे वे तृप्त हो जाते हैं, अर्थात् वह सब भोजन उन्हीं के पेट में पहुँच जाता है। इस विश्वास के अनुसार श्राद्ध के दिनों में हिन्दू लोग ब्राह्मणों को खूब माल खिलाते हैं और इस प्रकार अपने पितरों को तृप्त हुआ समझ लेते हैं। परन्तु यदि उनसे पूछा जाय कि यह खाना पितरों को पहुँच जाने से ब्राह्मणों के तुरन्त ही भूख क्यों नहीं लग आती है? या जब तुम यह मानते हो कि मनुष्य ही हाथी घोड़ा आदि किसी पर्याय में चला जाता है तब वह श्राद्ध के दिनों में तुम्हारा भोजन लेने कैसे आ सकता है? मान लो, वे तुम्हारे घर भोजन लेने आते हैं, तो इन दिनों में तुमको और तुम्हारे ब्राह्मणों को भी अपनी अपनी पहली पर्याय की संतान के घर चला जाना चाहिए था, परन्तु तुम तो कहीं नहीं जाते हो और न बिना खाये तुम्हारा पेट ही भरता है। श्राद्ध के दिनों में केवल तुम्हारा ही नहीं, वरन् तुम्हारे घर के गाय बैल आदि ढोरों का भी पेट भर जाना चाहिए था, क्योंकि इन दिनों में तो इनके पूर्वजन्म की संतानों ने इनके नाम से भी ब्राह्मणों को खूब भोजन खिलाया होगा। यदि कहो कि जो मनुष्य भूत-प्रेत की पर्याय में जाते हैं वे ही श्राद्ध के दिनों मे आते हैं तो फिर तुम अपने घर के सभी मृतकों का श्राद्ध क्यों करते हो? इसके सिवा तुम सभी प्राणियों में अपने समान ही जीव मानते हो, अर्थात् जैसा जीव मनुष्य के शरीर में है वैसा ही कीड़े-मकोड़े आदि समस्त जीवों में भी है। परन्तु जूं खटमल, कीड़े मकोड़े, मच्छर मक्खी, पिस्सू आदि लाखों करोड़ो जीव जो प्रतिदिन लाखों करोड़ों की संख्या में तुम्हारे घरों में मरते रहते हैं, उनमें से तो तुम किसी का भी भूत-प्रेत होना नहीं जानते हो और न उनसे डरते ही हो; फिर एक मनुष्य के मर जाने पर उसका ही भूत-प्रेत होना क्यों मानते हो? इन बातों का कुछ भी उत्तर न दे सकने पर भी लोग श्राद्ध करना नहीं छोड़ते हैं।

-(शेष अगले अंक में)

गतांक से आगे–

स्वास्थ्य चर्चा

दोनों को मिलाकर चाटने से श्वास, खाँसी, सर्दी का जुकाम, कफ और अरुचि रोग दूर होते हैं।

13. 3–4 बड़ी पीपलों को 3–4 बाँसे के फूलों के साथ खरल करके मधु के साथ थोड़ा–थोड़ा चटाने से, कैसी भी खाँसी हो, थोड़े ही समय में भाग जाती है।

14. लौंग, काली मिर्च, बहेड़े का छिलका–प्रत्येक 10–10 ग्राम। कत्थे का सार 30 ग्राम। सबको बारीक पीसकर कीकर की छाल के काढ़े में घोटकर चने के बराबर गोली बना लें। इन गोलियों को चूसने से खाँसी में अतिशीघ्र लाभ होता है। कुछ घण्टे बाद ही खाँसी विदा होने लगती है।

15. काकड़ासींगी 10 ग्राम को बारीक पीसकर 4–4 ग्रेन की पुड़िया बना लें। प्रातः सायं एक–एक पुड़िया पानी के साथ दिया करें। यह औषधि गुणोंसे भरपूर है। अनेक बार बड़े–बड़े योगों को भी मात कर देती है।

16. हरड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ, कालीमिर्च और पीपल, सभी को समभाग लेकर कूट–पीसकर चूर्ण बना लें। प्रतिदिन 3–3 ग्राम दवा शहद के साथ चाटने से हर प्रकार की खाँसी दूर हो जाती है।

17. गुड़ पुराना 10 ग्राम, सरसों का तेल 10 ग्राम, दोनों को मिलाकर चाटने से खाँसी और दमा नष्ट होते हैं।

18. शुद्ध आँवलासार गन्धक 3 ग्राम, कालीमिर्च का चूर्ण 3 ग्राम। दोनों को गाय के 10 ग्राम घी के साथ चाटने से 11 दिन में श्वास, खाँसी और राजयक्ष्मा रोग दूर हो जाते हैं।

19. फिटकरी भुनी हुई 10 ग्राम, खाँड़ देसी 10 ग्राम। दोनों को बारीक पीसकर 14 पुड़िया बना लें। सूखी खाँसीवाले को दूध से और आर्द्र खाँसीवाले की जल से खिलाएँ। इससे पुरानी–से–पुरानी खाँसी और साधारण दमा भी दूर हो जाता हैं।

20. सरसों का तेल दिन में दो–तीन बार गुदा के भीतरी भाग में और गुदा के ऊपर लगाने से सर्व प्रकार की खाँसी दूर हो जाती है।

21. बार–बार शीशा देखने से खाँसी में बहुत लाभ होता है।

22. 3 बार अकरकरा का काढ़ा बनाकर पीने से पुरानी खाँसी मिटती है।

23. अतीस का चूर्ण और शहद मिलाकर चाटने से खाँसी मिटती है।

24. तालीसपत्र को गर्म पानी में मसलकर पीने से दुर्जय खाँसी दूर होती है।

25. तुलसी के पत्तों का काढ़ा पीने से सूखी खाँसी दूर होती है।

खाँसी, जुकाम एवं नजला–

1. कालीमिर्च 25 ग्राम, पीपल छोटी 15 ग्राम, यव (जौ) क्षार 15 ग्राम, अनार का छिलका 100 ग्राम, गुड़ पुराना 200 ग्राम। सबको कूट-पीसकर जंगली बेरे बराबर गोलियाँ बना लें। एक-एक गोली मुँह में डालकर चूसते रहें। खाँसी के लिए अत्युत्तम योग है।

2. अदरक के बारीक टुकड़े कर लें और काली मिर्चों को कूट लें। फिर सभी वस्तुओं को 250 ग्राम पानी में औटाएँ। चौथाई पानी रहने पर उतारकर छान लें और पी जाएँ। 2-3 दिन में खाँसी और जुकाम भागता दिखाई देगा।

3. कालीमिर्च 3 ग्राम, गुड़ पुराना 20 ग्राम, गाय का दही 50 ग्राम। मिर्चों को बारीक पीस लें। फिर तीनों को मिलाकर प्रातःसायं सेवन करें, 3-4 दिन में रोग दूर हो जायगा और फिर नहीं होगा।

4. सुहागा फुलाकर एवं बारीक पीसकर शीशी में भर लें। 1 ग्राम दवा शहद में मिलाकर दिन में तीन बार चटाएँ। गर्म पानी में डालकर भी पी सकते हैं। इस दवा की प्रशंसा व्यर्थ है। अद्‌भुत एवं चमत्कारी दवा है। खाँसी पहले ही दिन में मिट जाती है। कुछ दिन सेवन करने से जुकाम भी मिट जाता है।

5. हींग 1 ग्राम, सोंठ 1 ग्राम, मुलहठी 1 ग्राम। तीनों को बारीक पीसकर गुड़ या शहद में मिलाकर चने के बराबर गोलियां बना लें। प्रातः सायं एक-एक गोली चूसने से दो-तीन में खाँसी और जुकाम का नाश हो जाता है।

6. मुलहठी 3 ग्राम, दालचीनी 1 ग्राम, छोटी इलायची 7 नग और मिश्री 20 ग्राम। प्रथम तीन वस्तुओं को जौ-कुट करके 400 ग्राम पानी में औटाएँ। जब आधा पानी रह जाए तब उतारकर छान लें और मिश्री मिलाकर रोगी को पिला दें। प्रातःसायं प्रयोग कर सकते हैं। तीन दिन सेवन करने से नजला ठीक हो जाता है। गुड़, तेल, खटाई और लालमिर्च का परहेज करें।

खाज-

1. बकरी की मैंगिनी 50 ग्राम को 200 ग्राम सरसों के तेल में औटाकर छान लें। इस तेल की सारे शरीर पर मालिश करने से तमाम उम्र खुजली नहीं होगी।

2. बूनी का रस और चमेली का तेल, दोनों को समभाग मिलाकर मालिश करने से सूखी खुजली जाती रहती है।

3. सरसों का तेल 50 ग्राम लेकर अग्नि पर पकाएँ। जब लाल हो जाए तब उतारकर उसमें 10 ग्राम आक का दूध डाल दें। दूध जल जाने पर तेल को छानकर रख लें। इस तेल की दिन में दो बार मालिश करने से 3-4 दिन में खुजली मिट जाती है। मालिश के 2-3 घण्टे बाद स्नान कर सकते हैं।

4. सत्यानाशी की जड़ 8 ग्राम, कालीमिर्च 5 नग, दोनों को 250 ग्राम पानी में पीसकर पीने से दस्त साफ होकर रक्त शुद्ध होता है और फोड़े, फुंसी, दाद, खाज, आतशक (उपदंश) आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

नोट- औषधि-सेवन-काल में घी का अधिक प्रयोग करें।

5. गन्धक आँवलासार शुद्ध 6 ग्राम, काली जीरी 7 ग्राम, सोना गेरू 6 ग्राम। तीनों को कुट-पीसकर तीन पुड़िया बना लें।

सेवन-विधि- पहले दिन साधारण विरेचन (जुलाब) दे लें। दूसरे दिन यह दवा सेवन कराएँ। एक पुड़िया प्रातः और दूसरी मध्याहन दही में मिलाकर खिलाएँ। तीसरी पुड़िया को सरसों के 50 ग्राम तेल में डालकर पकाएँ। तत्पश्चात् सारे शरीर पर मालिश करें। उस दिन आकाश में बादल न हों। दो घण्टे धूप में बैठे रहें, तत्पश्चात् स्नान करें। उस दिन खाने के लिए दही के अतिरिक्त कुछ न दें। पानी भी न पिएँ। दूसरे दिन प्रातः घी डालकर खिचड़ी खाएँ।

प्रभु कृपा से एक ही दिन में खुजली दूर हो जाती है और फिर जीवन-भर कभी नहीं होती।

गंज-

1. बुढ़ापे का गंज रोग ठीक नहीं होता। जवानी में गंज हो जाए तो हाथी दाँत की राख में रसौत और बकरी का दूध मिलाकर मलो।

2. आम के अचार का तेल (कम-से-कम एक वर्ष पुराना) प्रतिदिन सिर में मलने से गंज रोग दूर हो जाता है।

गठिया-

1. आवश्यकतानुसार एरण्ड की जड़ का चूर्ण कर लें। 6 ग्राम चूर्ण प्रतिदिन गिलोय के काढ़े के साथ दिन में तीन बार रोगी को फँकाएँ।

क़ाढ़ा बनाने की विधि- 20 ग्राम गिलोय को जौ-कुट करके 250 ग्राम पानी में औटाएँ। जब चौथाई रह जाए तो उतारकर छान लें। बस, काढ़ा तैयार है।

2. कपूर 10 ग्राम, तिल-तेल 400 ग्राम। दोनों को शीशी में भरकर दृढ़ कार्क लगा दें तथा शीशी को धूप में रख दें। जब दोनों वस्तुएँ मिलकर एकजान हो जाएँ तब काम में लाएँ।

इस तेल की मालिश से गठिया और अन्य वात-विकार अल्प समय में ही ठीक हो जाते हैं।

3. बकरी का मूत्र 7 किलो। लालमिर्च पटनावाली 250 ग्राम। दोनों को एक मिट्टी के बर्तन में पकाओ। जब पकते-पकते एक किलो रह जाए तब उतारकर छान लो। इसकी मालिश दर्दवाले स्थान पर 7 दिन तक करें।

4. असगन्ध बूटी की जड़, खाँड़, दोनों समभाग लें और कूट-पीसकर चूर्ण कर लें। प्रतिदिन प्रातःसायं 5 ग्राम से 10 ग्राम तक गर्म दूध के साथ खिलाया करें। प्रभु-कृपा से खाट पर पड़ा रोगी भी स्वस्थ हो जाएगा।

5. अजवायन, गूगल? मालकांगनी, कालादाना, चारों औषधियां समभाग लेकर कूट-पीसकर जल के साथ चने के बराबर गोलियां बना लें।

6. लौंग 1 ग्राम, संभालू की कोंपल 20 ग्राम दोनों को बारीक पीसकर बेर के बराबर गोलियां बना लें। दो गोली प्रातः दो गोली सायं बासी पानी के साथ दें। अतीव गुणकारी औषधि है। बड़े-बड़े योगों से भी बाजी मार ले जाती है।

7. हालू, कलौंजी, मेंथी और अजवायन, चारों को समभाग लेकर कूट-पीसकर चूर्ण बना लें। प्रतिदिन 3 ग्राम दवा पानी के साथ फांक लें। गठिया और कमर-दर्द के लिए लाभदायक है।

8. कडू (इन्द्र जौ) आवश्यकतानुसार लेकर बारीक पीस लें और दुगुनी खांड मिला लें। प्रतिदिन 10 ग्राम दवा गर्म दूध से दिया करें। महीनों का जुड़ा हुआ रोगी कुछ ही दिनों में खुल जाएगा।

9. एरण्डी का तेल, लहसुन तथा रत्नजोत का रस, प्रत्येक 6-6 ग्राम। तीनों को मिलाकर पीने से 3-4 दिन में गठिया का दर्द नष्ट हो जाता है।

10. भेड़ का दूध 125 ग्राम, काला जीरा 6 ग्राम, अफीम 1/2 ग्राम, तीनों को घोट-पीसकर मिला लें। इसकी शरीर पर धीरे-धीरे मालिश करने से गठिया का दर्द नष्ट हो जाता है।

11. नमक 20 ग्राम, अजमोद 30 ग्राम, सोंठ 50 ग्राम, हरड़ 120 ग्राम सबको कूट-पीसकर चूर्ण बना लें। प्रतिदिन 6 ग्राम चूर्ण जल के साथ प्रयोग करें। गठिया रोग शीघ्र ही जाता रहेगा।

12. शतावर और विधारा 10-10 ग्राम का काढ़ा बनाकर पीने से गठिया रोग दूर होता है।

गर्भधारक योग-

1. गोरोचन 3 ग्राम, गजलीपल 10 ग्राम, असगन्ध 10 ग्राम, तीनों को बारीक कूट-पीसकर चूर्ण कर लें। ऋतुस्नान के पश्चात् चौथे दिन से 5 दिन तक प्रयोग करें, तत्पश्चात् गर्भाधान करें, अवश्य पुत्र उत्पन्न होगा।

2. सर्वप्रथम प्रदर रोग एवं मासिक धर्म की अनियमितता की चिकित्सा करें, फिर निम्न प्रयोग से अवश्य ही गर्भाधान होगा।

अश्वगन्ध (असगन्ध) नागोरी कूट-पीसकर चूर्ण बना लें और गोघृत से चिकना कर लें। मासिक धर्म के पश्चात् एक मास तक निरन्तर 6 ग्राम चूर्ण गोदुग्ध के साथ सेवन कराएँ, अवश्य गर्भधारण होगा।

3. शिवलिंगी के बीज नौ अदद ऋतुस्नान के पश्चात् चार दिनतक निरन्तर सेवन करें। तत्पश्चात् गर्भाधान करें तो अवश्य गर्भधारण होगा।

यदि एक बार में न हो तो तीन-चार बार में अवश्य इच्छा पूर्ण होगी।

गर्भरक्षा-

जिस स्त्री को गर्भपात हो जाता हो उसकी कमर में धतूरे की जड़ बांध दें। इससे गर्भपात नहीं होगा। जब नौ मास पूर्ण हो जाएँ तब जड़ खोल दें।

-(शेष अगले अंक में)

ऋषिवर ने भर दिये मधु कलश, सारे रीते-रीते

तर्ज: अभी-अभी एक गीत लिखा है

रचयिता: रोहित आर्य, मोबा0 8958682489

ऋषिवर ने भर दिये मधु कलश, सारे रीते-रीते,
हम सबको था.... .....॥

मेरे प्यारे भारत में जब, घोर अन्धेरा छाया,
टंकारा से बनकर के, सूरज था ऋषिवर आया।
अन्धकार का किया सफाया, वेदों की ज्योति से,
हम सबको था.... .....॥ 1॥

ऋषिवर ने प्रज्ञा चक्षु से, ज्ञान यहाँ था पाया,
गुरु विरजानन्द के कारण, हमने था हीरा पाया।
गुरुवर ने ऋषि दयानन्द थे, बेहद मन से सींचे,
हम सबको था.... .....॥ 2॥

ढोंग और पाखण्ड हर तरफ, पैर पसार रहा था,
और अंधविश्वास यहाँ कर, भीषण वार रहा था।
पोल खोल कर पाखण्डों के, झण्डे कर दिये नीचे,
हम सबको था.... .....॥ 3॥

मूर्ति और कब्रों की पूजा, में सब लोग फँसे थे,
पण्डे और मौलवी के, चक्कर में सभी कसे थे।
खण्डन करके इनका, पाखण्डी थे खूब घसीटे,
हम सबको था.... .....॥ 4॥

यहाँ पादरी और मौलवी, धर्म बदल देते थे,
उनकी बातों में आकर, कुछ हिन्दू चल देते थे।
किया प्रचण्ड प्रहार ऋषि ने, रगड़ दिये धरती से,
हम सबको था.... .....॥ 5॥

यहाँ नारियों को पैरों की, जूती मान रहे थे,
घर में करके बन्द पुरुष, सब सीना तान रहे थे।
ऋषिवर ने बतलाया नारी, नीचे न देवी से,
हम सबको था.... .....॥ 6॥

छोटी जाति के लोगों संग, अत्याचार हुआ था,
अपना यह हिन्दू समाज, बेहद बीमार हुआ था।
गले लगा दलितों को ऋषिवर, कर गये काम सुभीते,
हम सबको था.... .....॥ 7॥

शूद्र और स्त्री को पढ़ने, का अधिकार नहीं था,
धूर्त और पाखण्डी लोगों, का व्यापार यही था।
वेद ज्ञान सबको बाँटा था, लड़कर सकल जमीं से,
हम सबको था.... .....॥ 8॥

सबसे पहले स्वराज्य का, ऋषिवर ने नाद सुनाया,
जिसको सुनकर के लाखों ने, अपना लहू बहाया।
तब जाकर लोगों ने गाये, गाने आजादी के,
हम सबको था.... .....॥ 9॥

तन-मन सदा स्वदेशी होवे, हो अपनी ही भाषा,
हाथ पसारें न हम बिल्कुल, ले हाथों में कांसा।
देश हमारा आगे होवे, और सभी हों पीछे,
हम सबको था.... .....॥ 10॥

आकर के ऋषिवर ने हमको, वेद का ज्ञान दिया था,
दे सत्यार्थ प्रकाश हमें, हमको बलवान किया था।
जिसके आगे ढोंग और पाखण्ड हुए सब फीके,
हम सबको था.... .....॥11॥

सती प्रथा को बन्द कराया, बलि प्रथा रुकवाई,
यज्ञों की प्राचीन पद्धति, ऋषिवर ने बतलाई।

आर्य समाज बनाकर ऋषि ने, काम कर दिये नीके,
हम सबको था.... ..... ॥ 12॥

सारी दुनियाँ ने दुश्मन बन, जब ऋषिवर को घेरा,
कहा ऋषि ने नहीं डरूँगा, साथ ईश है मेरा।
ऋषियों के सिद्धान्त ऋषि ने, जीवन देकर सींचे,
हम सबको था.... ..... ॥ 13॥

सिर्फ हमारी रक्षा खातिर, दयानन्द थे आये,
राम-कृष्ण के बेटों के हित, दुनियाँ से टकराये।
'रोहित' मेरे प्यारे ऋषिवर, अमर हुए विष पीके,
हम सबको था.... ..... ॥ 14॥

❁❁❁

तपोभूमि मासिक के पाठकों से विनम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका प्रतिमाह आप तक पहुँच रही है। हमारा हर सम्भव प्रयास यही रहता है कि पत्रिका में उच्चकोटि के विद्वानों के सारगर्भित लेख प्रकाशित करके आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के सिद्धान्तों के अनुसार प्रचार करते हुये यह पत्रिका जन-जन तक पहुँचे। ताकि वे इसका पूर्णतया लाभ प्राप्त कर सकें। लेकिन यह तभी सम्भव है जब आप सबका सहयोग हमें मिले।

'तपोभूमि' मासिक के पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अपना वार्षिक शुल्क चालू वर्ष या पिछले वर्ष का शुल्क अभी तक नहीं भेजा है। वे शीघ्रातिशीघ्र शुल्क भिजवाने की व्यवस्था करें। वार्षिक शुल्क 150/- एक सौ पचास रूपये तथा पन्द्रह वर्ष हेतु 1500/- एक हजार पाँच सौ रूपये भेजकर पत्रिका का लाभ उठायें।

हम आपको वार्षिक विशेषांक सहित पत्रिका पहुँचाते रहेंगे। आपके सहयोग व हमारे परिश्रम से निरन्तरता बनी रहेगी और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी व आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार भी होता रहेगा।

हमें अपने ग्राहक महानुभावों से यही अपेक्षा है कि बिना विघ्न कार्य सुचारू रूप से चलता रहे। साथ ही यह भी प्रार्थना है कि आप अपने परिश्रम से नवीन ग्राहक बनवाने का सौभाग्य प्राप्त करें।

-धनराशि भेजने हेतु बैंक का नाम व पता एवं खाता संख्या-

इण्डियन ओवरसीज बैंक

शाखा युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, जयसिंहपुरा, मथुरा

I F SC Code- IOB A 0001441

'सत्य प्रकाशन' खाता संख्या- 144101000002341

सत्य प्रकाशन के पुनः प्रकाशित उपलब्ध प्रकाशन

शुद्ध रामायण सजिल्द	मूल्य 220)	श्रीमद् भगवद्गीता एक सरल अध्ययन	मूल्य 20)
शुद्ध रामायण अजिल्द	मूल्य 170)	सन्ध्या रहस्य	मूल्य 20)
शुद्ध हनुमच्चरित	मूल्य 60)	गीता तत्व दर्शन	मूल्य 20)
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	मूल्य 40)	दयानन्द और विवेकानन्द	मूल्य 15)
यज्ञमय जीवन	मूल्य 30)	बाल मनुस्मृति	मूल्य 12)
भारत और मूर्तिपूजा	मूल्य 30)	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	मूल्य 12)
मील का पत्थर	मूल्य 20)	ओंकार उपासना	मूल्य 12)
भ्रांति दर्शन	मूल्य 20)	दादी पोती की बातें	मूल्य 10)
चार मित्रों की बातें	मूल्य 20)	आर्यों की दिनचर्या	मूल्य 12)
भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	मूल्य 20)		
शान्ता	मूल्य 20)		
गृहस्थ जीवन रहस्य	मूल्य 20)		

स्वास्थ्य चर्चा

लेखकः डॉ0 साहबसिंह वर्मा 'आर्य', लालपुर, जिला–मथुरा (उ0 प्र0) मोबा0 9457806932

अध्याय प्रथम

गायत्री महामन्त्र, गुरु मन्त्र, सरस्वती मन्त्र

ओ३म् भूर्भुव स्वः तत्सवितुरवरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।

भावार्थः हम उस प्राण स्वरूप दुःखनाशक सुखस्वरूप पापनाशक देवस्वरूप परमात्मा को अपनी अन्तर्रात्मा में धारण करे। वह परमात्मा हमें सद्बुद्धि प्रदान करे।

पद्यार्थः

तूने हमें उत्पन्न किया पालन कर रहा है तू।
तुझसे ही पाते प्राण हम दुःखियों के कष्ट हरता तू है॥
तेरा महान तेज है छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु वस्तु में तू रहा है विद्यमान॥
तेरा ही धरते ध्यान हम मांगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को श्रेष्ठ मार्ग पर चला॥

ईश विनय

वह सत्य हमें दो दयानिधे, कर्तव्य मार्ग पर डट जावै।
पर सेवा पर उपकार में हम, निज जीवन सफल बना जावै॥
हम दीन दुःखी निबलों बिकलों, के सेवक बन संताप हरें।
जो है अटके भूले भटके, उनको शुभ मार्ग बता जावें॥
छल दम्भ द्वेष पाखण्ड झूँठ, अन्याय से निश दिन दूर रहें।
जीवन हो शुद्ध सरल अपना, शुचि प्रेम सधा रस बरसावें॥
निज आन बान मर्यादा का, प्रभु ध्यान रहे अभिमान रहे।
जिस देश जाति में जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जावें॥

–अमर शहीद पं0 रामप्रसाद बिस्मिल
(जेल की कोठरी में)

सात सुख

प्रथम सुख निरोगी काया, दूसर सुख हो घर में माया।
तीसर सुख कुलवन्ती नारी, चौथा सुख सुत आज्ञाकारी॥

पंचम सुख हा सुन्दर बासा, छटवें सुख हों सज्जन पासा।
सप्तम सुख हों मित्र घनेरे, ऐसे नर नहिं जग बहुतेरे॥

(विद्वानों के अनुसार प्रचलित)

॥ किस माह में क्या न खावें॥

चैते गुड बैसाखै तेल, महुआ जेठ अषाढै बेल।
सावन साग न भादों दही, क्वार करेला कार्तिक मही।
अगहन जीरा, पूस धना, माघ मिश्री फागुन चना॥

(आयुर्वेद)

॥ किस माह में क्या खावें॥

कार्तिक दूध अगहन में आलू, पूस पान और माघ रतालू।
फागुन शक्कर घी जौ पाय, चैत आँवला कच्चा खाय॥
बैसाखै जो खाय करेला, जेठै दाख अषाढै केला।
सावन निशि में जब तब खाय, भादों ब्यार कबहुँ न पाय।
क्वार कामना देय बचाय, तौ सत् वर्ष आयु हुई जाय।

(निघण्टु)

॥ कभी गला न बैठे॥

काली मिर्च कुलन्जन शक्कर, तीनों पीसै भाग बराबर।
आधा तोला फंकी मारे, मानहुँ कोकिल राग उचारे॥

(भाव प्रकाश)

॥ कंठ सुरीला हो॥

सोंठ, कुलंजन, मिर्च, वच, पीपर, राई, पान।
सातों मधु संग खाइये होई कोकिलाबान॥

(सुश्रुत)

॥ दातुन के गुण॥

जो दातून बबूल की नित्य करै मन लाय।
टीस मिटै मजबूत हों पायरिया मिट जाय॥

(निघण्टु)

द्वादश अंगुल नीम की, नित्य करै दातून।
नष्ट होय कीटाणु सब, बन्द होय है खून॥ –(बाग भट्ट)

❁ सावन में पत्ती वाला साग न खाय। ब्यारू = रात्रि का भोजन, मही = मट्ठा, कामना= स्त्री प्रसंग, सत्= सौ, मधु = शहद।

लटजीरा दातून जो, नित्य करै मन लाय।
वाक सिद्ध नर होत है, स्मरण शक्ति बढ़ाय॥

(अमृत सागर)

सदा नाप दॉतून को, द्वादश अंगुल लाय।
ताकि थूक और लार सों, अंगुली भीग न जाय॥

(वैद्य चन्द्रोदय)

जब चालीस की आयु हो, तब न करै दातून।
जड़ें खुलें और हिल पड़ें, होवै बन्द न खून॥

(अनुभूत)

॥ दाँतों में चमक लाने वाला मन्जन॥

छिलका ले बादाम का पुंगी सहित जलाय।
नमक महीन मिलाइये दाँत देय चमकाय॥

॥ आजीवन दाँत न गिरें॥

त्रफला, त्रकुटा, तूतिया, पांचों नमक, पतंग।
दन्त वज्र सम होत है, माजूफल के संग॥
अरु छिलका बादाम का, लीजै खूब जलाय।
पिपरमेंट कर्पूर संग, मंजन लेऊ बनाय॥

(रस राज महोदधि)

स्पष्टीकरण– 1 तोला त्रफला, 1 तोला त्रकुटा, 2 तोला पांचों नमक, 1 तोला माजूफल, 1 तोला पतंग की लकड़ी, दो आना भर सेंधा हुआ तूतिया, दो आना भर पिपरमेंट, पांच तोला बादाम का जला हुआ छिलका (राख), चार आना भर छोटी इलाइची, 2 आना भर कपूर।

बनाने की विधि– उपरोक्त सभी औषधियाँ (सिर्फ पिपरमेंट, कपूर को छोड़कर) खरल में खूब महीन कूटकर कपड़े में होकर छालन लें। बाद में थोड़ा अलग करके कपूर व पिपरमेंट महीन पीसकर फिर सभी पाउडर में मिला लें और बन्द डिब्बे या शीशी में भर लें। इस प्रकार प्रतिदिन सुबह शाम इस मंजन को उंगली से दांतों पर मलें तथा पहले एक सप्ताह बुर्श से कर सकते हैं ज्यादा नहीं पांच मिनट मंजन करें तथा दस मिनट बाद कुल्ला करलें तुरन्त नहीं। शाम को भोजन के बाद।

टिप्पणी– (1) तूतिया को पीसकर तवे पर भूनें जब सफेद रंग का होकर कुछ कालापन आने लगे तो फिर शीघ्र ही उतार लो और पीसकर यह मंजन में डालना चाहिए। यह तूतिया शुद्ध करने की विधि है।

---

2 आना = ढाई ग्राम, त्रफला = हर्र, बहेड़ा, आंवला, तीनों फलों का छिलका बराबर मात्रा में लें, त्रकुटा = सोंठ, कालीमिर्च, पीपल तीनों बराबर मात्रा में।

(2) बादाम का छिलका इतना जलाएं कि जलकर उपले जैसी राख हो जाए।

नोट– सभी दांत रोगों का एक अत्यन्त शर्तिया नुस्खा है। निन्यानवे फीसदी लोगों को लाभ मिला है स्वयं मैंने प्रयोग करके देखा है।

।। कभी होंठ नहीं फटें।।

गर्मी बाढै पेट में तभी होठ फटि जाँय।
कडू तेल नाभि भरै कभी फटेंगे नाँय।।

(1) एक छोटे मिट्टी के दीपक को धोकर सरसों का तेल भर लें सोते समय नाभि पर चिपका लें ऊपर से कपड़े की चौड़ी पट्टी बांध लें सुबह सारा तेल नाभि पी चुकी होगी, इस प्रकार करे। इससे नाभि गिरना पेट कठोर रहना भी ठीक होते हैं।

(2) पय = दूध, गुल = जली तम्बाकू, लटजीरा = चिरचिटा, ओंगा, अकरकरा पुंगी = सुपारी। चमक लाने वाले मंजन में बादाम का छिलका और सुपारी बराबर मात्रा में लेनी चाहिए।

नोट– (1) ये सभी नुस्खे बिल्कुल सटीक काम करते हैं। केवल मरीज धैर्यपूर्वक कुछ ज्यादा दिन तक प्रयोग करें। लुकमान हकीम के फकीरी इलाज हैं। पंसारी की दुकान से लेकर के बहुत कम दामों में तैयार हो जाते हैं।

(2) कृपया यह देख लें औषधियां घुनी व बहुत पुरानी न हों।

❁❁❁

महापुरुषों की जयन्ती

स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती	2 फरवरी
जानकी जन्म (सीताजी)	8 फरवरी
समर्थ गुरु स्वामी रामदास	9 फरवरी
स्वामी दयानन्द सरस्वती	12 फरवरी
सरोजिनी नायडू	13 फरवरी
रामकृष्ण परमहंस	17 फरवरी
छत्रपति शिवाजी	19 फरवरी
महर्षि याज्ञवल्कय	20 फरवरी

14 फरवरी	मूलशंकर (दयानन्द) बोधरात्रि
28 फरवरी	राष्ट्रीय विज्ञान दिवस

महापुरुषों की पुण्यतिथि

कल्पना चावला	1 फरवरी
कन्हैयालाल मुंशी	8 फरवरी
पं0 दीनदयाल उपाध्याय	11 फरवरी
सुभद्राकुमारी चौहान	15 फरवरी
वासुदेव बलवंत फड़के	17 फरवरी
गोपालकृष्ण गोखले	19 फरवरी
कस्तूरबा गांधी	22 फरवरी
वीर सावरकर	26 फरवरी
चन्द्रशेखर आजाद	27 फरवरी
डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद	28 फरवरी

महर्षि दयानन्द

"मुक्तक"

रचयिताः रोहित आर्य, मोबा० 8958682489

कि कैसे हम चुकायेंगे, किये उपकार जो तूने,
जगाने अपने भारत को, सहे थे वार जो तूने,
ऋषिवर तेरे जो अहसान हैं, वह चुक नहीं सकते,
जगत् की झेलकर बाधा, दिये उपहार हैं तूने॥

पिलाया जहर दुनियां ने, मगर बिल्कुल न घबराया,
जगत की हर मुसीबत से, ऋषि था जम के टकराया,
सहे अपमान उसने देश के, सम्मान की खातिर,
ऋषि ने देश का गौरव, बुलंदी पर था पहुँचाया॥

ऋषिवर गर जो आते न, तो हरगिज हम न बच पाते,
कभी भी अपने मस्तक को, यूँ ऊँचा हम न रख पाते,
अगर ज्वाला न सुलगाता, ऋषिवर देशभक्ति की,
न इतनी शीघ्रता से हम, कभी आजाद हो पाते॥

इसी दुनियाँ ने ऋषिवर पै, रोज पत्थर थे बरसाए,
सता कर इस तरह उसको, विरोधी सारे हरषाये,
मगर आँधी में ऋषिवर ने, जलाई वेद की ज्योति,
किसी तूफान से हरगिज, नहीं ऋषिवर थे घबराये॥

वतन की दुर्दशा पै वो, सदा निज चैन खोता था,
इसलिये इसकी उन्नति के, हमेशा बीज बोता था,
कभी अपमान की चिन्ता, नहीं की उस ऋषिवर ने,
मगरभारत की हालत पै, सो सारी रात रोता था॥

गुलामी की हरेक जंजीर, सुनलो तोड़ दी उसने,
ढोंग-पाखण्ड की धारा, यहाँ पर मोड़ दी उसने,

जहर पीकर भी हम सबको, पिलाया उसने अमृत था,
भला भारत का करने को, समाधि छोड़ दी उसने॥

गुरु दण्डी के आकर के, द्वार को खटखटाया था,
मिला आशीष गुरुवर का, तो उनसे ज्ञान पाया था,
चुका कर के गए थे ऋण, गुरुवर का मेरे ऋषिवर,
एक आदेश पै गुरु के, सकल जीवन लुटाया था॥

जिन्होंने धर्म के संग में, किया हर दम बखेड़ा था,
पुण्य वेदों की शिक्षा को, किया जिसने भी टेड़ा था,
धर्म के हर विरोधी को, रगड़ डाला था धरती से,
हर एक ढोंगी व पाखंडी, को ऋषिवर ने उधेड़ा था॥

हुआ अपमान जिनका था, उन्हें सम्मान दिलवाया,
पढ़ने-लिखने का नारी ने, यहाँ अधिकार था पाया,
बनी पैरों की जूती जो, थी हरदम ठोकरें खाती,
ऋषिवर ने उसी नारी, को देवी था जी बतलाया॥

लगाकर जान की बाजी, वो दिन और रात खेला था,
जगत की हर मुसीबत को, यहाँ हँस-हँस के झेला था,
खड़ा चट्टान की भाँति रहा, बिलकुल न घबराया,
विरोधी सारी दुनियाँ थी, मेरा ऋषिवर अकेला था॥

है सच्चा ज्ञान वेदों में, यही हुँकार उसकी थी,
तड़प जाते थे पाखण्डी, कि ऐसी मार उसकी थी,
हमें अभिमान करना था सिखाया, अपने भारत पै,
मेरा भारत था सर्वोत्तम, यही ललकार उसकी थी॥

दयानन्द नाम का हमने, मसीहा एक पाया था,
डूबते देश भारत को, उसी ने ही बचाया था,
देश के हर विरोधी को, रगड़ डाला मेरे ऋषि ने,
दहाड़ा शेर के जैसे, तो जग ये थरथराया था॥

❁❁❁

देव दयानन्द

रचयिताः- ओंकारसिंह विभाकर, उमरा(सुल्तानपुर)उ0प्र0

'भारत है भारतीयों के लिये' बताया कौन?
यहाँ जब अंग्रेजी राज्य ही प्रचण्ड था।
उत्कृष्ट होता है स्वदेशी राज्य औ स्वराज्य,
विधवा उबारने में कौन मेरूदण्ड था।
नारियों को मान दिया, दलितों को प्रान दिया,
वैदिक प्रकाश पुंज कौन पूर्ण चन्द था।
देश की दशा निहारि फूट फूट रोया कौन,
भारत सपूत वही देव दयानन्द था॥ 1॥

धर्म के ही नाम पर अगणित पंथ बने,
ज्ञान के प्रकाश का कपाट ही तो बन्द था।
काली झूला-काशी करवट-मोक्षधाम बना,
पाखण्डवाद का सितारा ही बुलन्द था।
नारियों-दलित-दीन-दुखिया जनों के लिये,
मन्दिर-विद्यालयों का दरवाजा बन्द था।
किसने मिटाया इन अमिट कुरीतियों को,
भारत सपूत वही देव दयानन्द था॥ 2॥

भारत भूमि - चतुर्दिक हिन्सक,
दस्यु बलाहक था घिर आया।
मन्दिर भव्य गिराये गये बहु,
वैदिक ग्रन्थ निकेत जलाया।
भौन असंख्य बने शव भौन,
गया व्यभिचार का हाट लगाया।
राम के वन्शज रूद्र बनो,
यह पन्थ दयानन्द ने बतलाया॥ 3॥

आज सभी नगरी - पथ हाट में,
ही मदिरालय केन्द्र सुहाया।
झूठ प्रपंच प्रभंजन ने सत,
सात्विकता इतिहास उड़ाया।
आज प्रजाधर गोमट रूप में,
चाय ने दूध को है ठुकराया।
राम के वन्शज आर्य बनो,
अब आर्य समाज ने आय बतलाया॥ 4॥

मामा को पठाया स्वर्ग, नाना को दिलाया राज,
जननि जनक कारागार से निकारे हैं।
भनत विभाकर कुचाली नृप को ही सदा,
साम-दाम-दण्ड-भेद नीति से पछारे हैं।
भारत को तत्व ज्ञान दिया महा भारत में,
सारे जनमानस में आज भी जो प्यारे हैं।
देवकी ने जाये, वसुदेव ने पठाये,
जसुदा जियाये कृष्ण तीन लोक न्यारे हैं॥ 5॥

सत्य औ असत्य की विवेचना प्रचण्ड कर,
सत्य प्रति श्रद्धा औ विश्वास मेखगाड़ दी।
भनत विभाकर असत्य में अश्रद्धा कर,
विद्या के प्रवाह से अविद्या को उखाड़ दी।
सत्य उपदेशामृत सबको पिलाते रहे,
जन-मन से अन्धभक्ति को उजाड़ दी।
पूज्यपाद स्वामीको नमन शत-शतबार,
ओ3म् की पताका सारी बसुधा में गाड़ दी॥ 6॥ ❁

पाठकों से विनम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका के उन पाठकों से विनम्र निवेदन है जिन्होंने वर्ष **2016** का शुल्क बार-बार के पत्र लेखन के बाद भी अभी तक जमा नहीं कराया है वे वर्ष **2017** तथा **2018** के वार्षिक शुल्क के साथ अविलम्ब **'सत्य प्रकाशन'** कार्यालय को जमा करायें। वर्ष 2017 का वार्षिक विशेषांक **शान्ता** तैयार हो चुका है शीघ्र ही आप तक पहुँचाया जायगा। लेकिन जिनका शुल्क जमा होगा केवल उन्हीं को। इसलिये आपसे पुनः निवेदन है कि आप शीघ्रातिशीघ्र शुल्क भेजकर अपनी प्रत्येक माह की पत्रिका व वार्षिक विशेषांक प्राप्त करते रहें। आशा है पाठकगण हमें निराश नहीं करेंगे। ***-व्यवस्थापक***

श्री गुरु विरजानन्द आर्ष गुरुकुल वेदमन्दिर, मथुरा

में

ऋषि बोधोत्सव पर

51 कुण्डीय यज्ञ का भव्य आयोजन
दिनांक 14 फरवरी 2018

सज्जनो !

प्राय: सांसारिक बन्धनों मे जगड़े गृहस्थ जीवन में व्यक्ति मनुष्य जीवन के वास्तविक उद्देश्य से विमुख हो जाता है। अज्ञानतावश अपने ही विपरीत कर्मों से दु:खों के द्वार खोल लेता है। इस बात को ध्यान में रखकर सर्वजन के हितचिन्तक ऋषियों ने सबके कल्याण की भावना से अनेक प्रकार के यत्न किये हैं। उन प्रयत्नों में ही धार्मिक आयोजनों की योजना रखी। इन धार्मिक आयोजनों के बहाने से व्यक्ति समय निकालकर यज्ञादि शुभ कर्म में प्रेरित हो जाता है। विद्वानों के उपदेश सुनकर अपना कल्याण करने में समर्थ हो जाता है। इसी भावना से प्रेरित होकर आपके अपने ही श्री गुरु विरजानन्द आर्ष गुरुकुल, वेदमन्दिर, मथुरा में प्रतिवर्ष की महाशिवरात्रि पर्व ऋषि बोधात्सव के रूप में मनाया जाता है। 51 कुण्डीय यज्ञ भी सर्वकल्याण की कामना से रखा जाता है। आप भी इस पावन अवसर पर सपरिवार यजमान के रूप में पधारें ऐसी हमारी कामना है। अति सुन्दर हो यदि आप भारतीय वेश–भूषा में आयें। यजमान बनने के इच्छुकजन अपने साथ घी, कटोरा, कपूर, दियासलाई, चम्मच, लोटा अवश्य लायें, जिससे यज्ञ करने में सुविधा हो। यदि न ला सकें तो यह व्यवस्था यहाँ भी रहेगी। 14 फरवरी 2018 बुधवार को प्रात: 8 बजे यज्ञस्थल पर अवश्य आ जायें। यज्ञ के बाद भण्डारे की व्यवस्था है प्रसाद भी यहीं ग्रहण करें। पुन: नगर कीर्तन 2 बजे से शोभायात्रा के रूप में होगा। अत: इस पावन सुअवसर को हाथ से न जानें दें।

कर यज्ञ यथावत दान करे, फल सौगुन होय ऋषि बतलाते।
दु:ख दूर करे दुखिया जन के, उसके करता सुख–साधन पाते।
सद्पात्र प्राणिन को भय हीन करे, मिलें फल जो न कभी मिट पाते।
सब प्राणिन को भय हीन करे, उसके फल की गणना न बताते।।

उत्सव की सफलता का दायित्व आप सभी याज्ञिक जनों पर है। अत: सभी सांसारिक कार्यों को विराम देकर आयोजन को सफल बनाकर पुण्य के भागी बनें।

निवेदक

(प्रधान)	(मंत्री)	(अधिष्ठाता)
डॉ0 सत्यप्रकाश अग्रवाल	**बृजभूषण अग्रवाल**	**आचार्य स्वदेश**

कष्टों की आधार शिला पर,
सुख का सृजन हुआ करता है॥

नया निखार सदा पाता है,
अग्नि में तप-तप कर कुन्दन।
नई सुरभि शीतलता लाता,
पत्थर पर घिस-घिसकर चंदन॥

पाने को देवत्व शिला,
आघात सहा करती शिल्पी के।
अन्तर मन में पोषित पीड़ा,
जागृति करती भारव कवि के॥

कठिन साधना करके ही,
मन चाहा साध्य मिला करता है॥

बने शहीद मील के पत्थर,
तब मिल पाई है आजादी।
तन-मन-धन सब अर्पित करके,
बनते हैं सुभाष और गाँधी॥

जन-जागृति के हेतु जिन्दगी,
अगणित हवन हुआ करती हैं।
दानवता से टक्कर लेकर,
राम और कृष्ण बना करती हैं॥

चिन्तन, सहनशक्ति, साहस से,
जीवन दीप जला करता है।
त्याग और बलिदानों से ही,
नव मिर्नाण हुआ करता है॥

❁❁❁

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण (सजिल्द)	220.00	भ्रांति दर्शन	20.00
शुद्ध रामायण (अजिल्द)	170.00	शान्ता	20.00
शंकर सर्वस्व	120.00	दयानन्द और विवेकानन्द	15.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00
शुद्ध कृष्णायण	50.00	बाल मनुस्मृति	12.00
शुद्ध हनुमच्चरित	60.00	ओंकार उपासना	12.00
विदुर नीति	40.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	10.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	दादी पोती की बातें	10.00
चाणक्य नीति	40.00	क्या भूत होते हैं	10.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	आर्यों की दिनचर्या	10.00
नित्य कर्म विधि	32.00	महाभारत के कृष्ण	8.00
वेद प्रभा	30.00	ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
शान्ति कथा	30.00	सच्चे गुच्छे	8.00
भारत और मूर्ति पूजा	30.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
यज्ञमय जीवन	30.00	वृक्षों में जीव है या नहीं	5.00
दो बहिनों की बातें	30.00	गायत्री गौरव	5.00
दो मित्रों की बातें	30.00	महर्षि दयानन्द की मान्यतायें	5.00
संगीत रत्नाकर प्रथम भाग	25.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
चार मित्रों की बातें	20.00	सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	5.00
भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00	मुक्ति प्रदाता त्रिवेणी	5.00
मील का पत्थर	20.00	जीजा साले की बातें	5.00

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2018 के लिये वार्षिक शुल्क 150/– रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 1500/– भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक–पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

.....

.....

.....

.....

..... पिन कोड .....

पत्र व्यवहार का पता :–
व्यवस्थापक – कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर– गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
फोन (0565) 2406431
मोबाइल– 9759804182

...मी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए मित्तल कम्प्यूटर प्रिंटर्स, वृन्दावन रोड, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित

Yogendra # 9927136600